यशपाल

129

सच बोलने की भूल...

व - लखनऊ

H
813.31
Y26S

Sach bolne ki bhool

सच बोलने की भूल

कहानी संग्रह

Kahani sangrah

Yashpal

यशपाल

विप्लव कार्यालय, २१ शिवाजी मार्ग, लखनऊ

Viplab karyalaya, Lucknow

विप्लव पुस्तक माला—४०

दूसरा संस्करण
मई १९६८

Library IIAS, Shimla
H 813.31 Y 26 S
00046471

पुस्तक के प्रकाशन और अनुवाद के सर्वाधिकार लेखक द्वारा स्वरक्षित हैं।

H
813.31
Y26S

मूल्य पांच रुपया

INDIAN INSTITUTE OF ADVANCED STUDY
Acc. No. 46471
2.2.74
SIMLA

मुद्रक
साथी प्रेस, लखनऊ

समर्पण

सत्य की मान्यता का आवरण
लिये प्रवंचनाओं पर विचार
के लिये ।

यशपाल

क्रम

१—सच बोलने की भूल	९
२—एक हाथ की उँगलियां	१९
३—आत्मज्ञान	२९
४—अपमान की लज्जा	३७
५—होली का मज़ाक	४७
६—खुदा का खौफ़	५३
७—नारद परशुराम संवाद	६३
८—चौरासी लाख जोनि	७४
९—खुदा और खुदा की लड़ाई	८१
१०—नारी की ना	९१
११—फलित ज्योतिष	९८
१२—लखनऊ वाले	१०७

भूमिका

मेरा नया कहानी संग्रह 'सच बोलने की भूल' पाठकों के सामने प्रस्तुत है। गत २३ वर्षों में अन्य रचनाओं के अतिरिक्त यह मेरा चौदहवां कहानी संग्रह है। आज भी मुझे अपनी रचनाओं के सम्बन्ध में पाठकों की प्रतिक्रिया जानने की उतनी ही उत्सुकता है जितनी कि अपने प्रथम संग्रह 'पिंजरे की उड़ान' प्रकाशित होने के समय थी।

पाठकों की परख और सहृदयता से तेइस वर्षों में मैंने पर्याप्त आत्मविश्वास पाया है परन्तु हिन्दी कथा-साहित्य उससे भी अधिक अनुपात में विकास और प्रगति कर चुका है। आज कहानी के सम्बन्ध में कहानी-लेखकों और पाठकों की परख बहुत गहरी और व्यापक हो चुकी है। कहानी के सम्बन्ध में नये-नये विचार सामने आ रहे हैं। हिन्दी- कहानी नित्य नयी से नयी शिल्प-विधाओं और विषय वस्तुओं को समेटती जा रही है। वह विश्वासपरक आदर्शवाद की सीमाओं को लांघकर यथार्थवाद, विश्लेषण, उद्‌घाटन, अन्वेषण की मंजिलों को तय करके सुझाव की ओर भी रही है। हिन्दी कहानी में परिमार्जन और विकास की भावना से सूक्ष्मता और संकेत की ओर भी प्रवृत्ति दिखायी दे रही है। असफलता के भय से नये प्रयोगों से आशंकित होना विकास के प्रयत्नों और मार्ग में बाधा बन सकता है। हमारे कौन प्रयोग कितने सफल होते हैं, यह परिणाम ही बतायेंगे।

मैं गत तेइस वर्षों में हिन्दी कहानी के विकास के साथ कदम मिलाये रखने का यत्न करता रहा हूं परन्तु विधा के सम्बन्ध में मेरी धारणा रही है कि कहानी की कला दृष्टान्त द्वारा विचारों की अभिव्यक्ति है। दृष्टान्त का प्रयोग चाहे बहुत संक्षेप अथवा संकेत-मात्र से ही हो परन्तु कहानी का मेरुदण्ड दृष्टान्त ही होता है। इस संग्रह में संकलित कहानियों में भी मेरा यही दृष्टिकोण है। पाठक ही निर्णय करेंगे—कहानी के विकास और परख सम्बन्धी नई धारणाओं से भी मेरे प्रयत्न सफल समझे जा सकते हैं या नहीं!

यशपाल

महानगर, लखनऊ
जुलाई १९६२

सच बोलने की भूल

सच बोलने की भूल

शरद के आरम्भ में दफ्तर से दो मास की छुट्टी ले ली थी। स्वास्थ्य सुधार के लिये पहाड़ी प्रदेश में चला गया था। पत्नी और बेटी भी साथ थीं। बेटी की आयु तब सात वर्ष की थी। उस प्रदेश में बहुत छोटे-छोटे पड़ाव हैं। एक खच्चर किराये पर ले लिया था। असबाब खच्चर पर लाद लेते थे और तीनो हंसते-बोलते, पड़ाव-पड़ाव पैदल यात्रा कर रहे थे। रात पड़ाव की किसी दूकान पर या डाक-बंगले में बिता देते थे। कोई स्थान अधिक सुहावना लग जाता तो वहां दो रात ठहर जाते।

एक पड़ाव पर हम लोग डाक-बंगले में ठहरे हुये थे। वह बंगला छोटी सी पहाड़ी के पूर्वी आंचल में है। बंगले के चौकीदार ने बताया—साहब लोग आते हैं तो चोटी से सूर्यास्त का दृश्य जरूर देखते हैं। चौकीदार ने बता दिया कि बंगले के बिलकुल सामने से ही जंगलाती सड़क पहाड़ी तक जाती है।

पत्नी सुबह आठ मील पैदल चल चुकी थी। उसे संध्या फिर पैदल तीन मील चढ़ाई पर जाने और लौटने का उत्साह अनुभव न हुआ परन्तु बेटी साथ चलने के लिये मचल गयी।

चौकीदार ने आश्वासन दिया—लगभग डेढ़ मील सीधी सड़क है और फिर पहाड़ी पर अच्छी साफ पगडंडी है। जंगली जानवर इधर नहीं हैं। सूर्यास्त के बाद कभी-कभी छोटी जाति के भेड़िये जंगल से निकल आते हैं। भेड़िये भेड़-बकरी के मेमने या मुर्गियां उठा ले जाते हैं, आदमियों के समीप नहीं आते।

मैं बेटी को साथ ले कर सूर्यास्त से तीन घंटे पूर्व ही चोटी की ओर चल पड़ा। सावधानी के लिये टार्च साथ ले ली। पहाड़ी तक डेढ़ मील रास्ता बहुत सीधा-साफ था। चढ़ाई भी अधिक नहीं थी। पगडंडी से चोटी तक चढ़ने में भी कुछ कठिनाई नहीं हुई।

पहाड़ की चोटी पर पहुंच कर पश्चिम की ओर बर्फानी पहाड़ों की शृंखलायें फैली हुई दिखाई दीं। क्षितिज पर उतरता सूर्य बरफ से ढकी पहाड़ी की रीढ़ को छूने लगा तो ऊंची-नीची, आगे-पीछे खड़ी हिमाच्छादित पर्वत-शृंखलायें अनेक इन्द्रधनुषों के समान झलमलाने लगीं। हिम के स्फटिक कणों की चादरों पर रंगों के खिलवाड़ से मन उमग-उमग उठता था। बच्ची उल्लास से किलक-किलक उठती थी।

सूर्यास्त के दृश्य का सम्मोहन बहुत प्रबल था परन्तु ध्यान भी था—रास्ता दिखाई देने योग्य प्रकाश में ही डाक बंगले को जाती जंगलाती सड़क पर पहुंच जाना उचित है। अंधेरे में असुविधा हो सकती है।

सूर्य आग की बड़ी थाली के समान लग रहा था। वह थाली बरफ की शूली पर, अपने किनारे पर खड़ी वेग से घूम रही थी। आग की थाली का शनैः-शनैः बरफ के कंगूरों की ओट में सरकते जाना बहुत ही मनोहारी लग रहा था। हिम के असम विस्तार पर प्रतिक्षण रंग बदल रहे थे। बच्ची उस दृश्य को विस्मय से मुंह खोले अपलक देख रही थी। दुलार से समझाने पर भी वह पूरे सूर्य के पहाड़ी की ओट में हो जाने से पहले लौटने के लिये तैयार नहीं हुई।

सहसा सूर्यास्त होते ही चोटी की बरफ पर श्यामल नीलिमा फैल गयी। पहाड़ी की चोटी पर अब भी प्रकाश था पर हम ज्यों-ज्यों पूर्व की ओर नीचे उतर रहे थे, अंधेरा घना होता जा रहा था। आप को भी अनुभव होगा कि पहाड़ों में सूर्यास्त का झुटपुट उजाला बहुत देर तक नहीं बना रहता। सूर्य पहाड़ की ओट में होते ही उपत्यका में सहसा अंधेरा हो जाता है।

मैं पगडंडी पर बच्ची को आगे किये पहाड़ी से उतर रहा था। अब धुंधलका हो जाने के कारण स्थान-स्थान पर कई पगडंडियां निकलती-फटती जान पड़ती थीं। हम स्मृति के अनुभव से अपनी पगडंडी पहचान कर नीचे जिस रास्ते पर उतरे, वह डाक बंगले की पहचानी हुई जंगलाती सड़क नहीं जान पड़ी। अंधेरा हो गया था। रास्ता खोजने के लिये चोटी की ओर चढ़ते तो अंधेरा अधिक घना हो जाने और अधिक भटक जाने की आशंका थी। हम अनुमान से पूर्व की ओर जाती पगडंडी पर चल पड़े।

जंगल में घुप्प अंधेरा था। टार्च से प्रकाश का जो गोला सा पगडंडी पर बनता था, उससे कंटीले झाड़ों और ठोकर से बचने के लिये तो सहायता मिल सकती थी परन्तु मार्ग नहीं ढूंढ़ा जा सकता था। चौकीदार ने आंचल में आस-

पास काफी बस्ती होने का आश्वासन दिया। सोचा—समीप ही कोई बस्ती या झोपड़ी मिल जायेगी, रास्ता पूछ लेंगे।

हम टार्च के प्रकाश में झाड़ियों से बचते पगडंडी पर चले जा रहे थे। बीस-पचीस मिनट चलने के बाद हमारा रास्ता काटती हुयी एक अधिक चौड़ी पगडंडी दिखायी दे गयी। सामने एक के बजाय तीन मार्ग देख कर दुविधा और घबराहट हुई, ठीक मार्ग कौन सा होगा ? अपने लक्ष्य की ओर बढ़ने की अपेक्षा भटकाव का ही अवसर अधिक हो गया था। घना अंधेरा, जंगल में रास्ता जान सकने का कोई उपाय नहीं था। आकाश में तारे उजले हो गये थे परन्तु मुझे तारों की स्थिति से दिशा पहचान सकने की समझ नहीं है। पूर्व दिशा दायीं ओर होने का अनुमान था इसलिये चौड़ी पगडंडी पर दायीं ओर चल दिये। आधे घंटे तक चलने पर एक और पगडंडी रास्ता काटती दिखाई दी। समझ लिया, हम बहुत भटक गये हैं। मैंने सीधे सामने चलते जाना ही उचित समझा।

जंगल में अंधेरा बहुत घना था। उत्तरी वायु चल पड़ने से सर्दी भी काफी हो गई थी। अपनी घबराहट बच्ची से छिपाये था। बच्ची भयभीत न हो जाये, इसलिये उसे बहलाने के लिये और उसे रुकावट अनुभव न होने देने के लिये कहानी सुनाने लगा परन्तु बहलाव थकावट को कितनी देर भुलाये रखता ! बच्ची बहुत थक गई थी। वह चल नहीं पा रही थी। कुछ समय उसे शीघ्र ही बंगले पर पहुंच जाने का आश्वासन देकर उत्साहित किया और फिर उसे पीठ पर उठा लिया। वह मेरे कंधे के ऊपर से मेरे सामने टार्च का प्रकाश डालती जा रही थी। मैं बच्ची के बोझ और थकावट से हांफता हुआ अज्ञात मार्ग पर, अज्ञात दिशा में चलता जा रहा था। मेरी पीठ पर बैठी बच्ची सर्दी से सिहर-सिहर उठती थी और मैं हांफ-हांफ कर पसीना-पसीना हो रहा था। कुछ-कुछ समय बाद मैं दम लेने के लिये बच्ची को पगडंडी पर खड़ा करके घड़ी देख लेता था। अधिक रात न हो जाने के आश्वासन से कुछ साहस मिलता था।

हम अजाने जंगल के घने अंधेरे में ढाई घंटे तक चल चुके थे। मेरी घड़ी में साढ़े नौ बज गये तो मेरा मन बहुत घबराने लगा। बच्ची को कहानी सुना कर बहलाना संभव न रहा। वह जंगल में भटक जाने के भय से मां को याद कर ठुमक-ठुमक कर रोने लगी। बंगले में अकेली, घबराती पत्नी के विचार ने और भी व्याकुल कर दिया। मेरी टांगें थकावट से कांप रही थीं। सर्दी बहुत बढ़ गई थी। जंगल में वृक्ष के नीचे रात काट लेना भी संभव नहीं था। छोटे भेड़िये

भी याद आ गये। वहां के लोग उन भेड़ियों से नहीं डरते थे पर छोटी बच्ची साथ होने पर भेड़िये से भेंट की आशंका से मेरा रक्त जमा जा रहा था।

हम जंगल से निकल कर खेतों में पहुंचे तो दस बज चुके थे। कुछ खेत पार कर चुके तो तारों के प्रकाश में कुछ दूरी पर एक झोपड़ी का आभास मिला। झोपड़ी में प्रकाश नहीं था। बच्ची को पीठ पर उठाये फसल भरे खेतों में से झोपड़ी की ओर बढ़ने लगा। झोपड़ी के कुत्ते ने हमारे उस ओर बढ़ने पर एतराज़ किया। कुत्ते की क्रोध भरी ललकार से सांत्वना ही मिली। विश्वास हो गया, झोपड़ी सूनी नहीं थी।

पहाड़ों में वर्षा की अधिकता के कारण छतें ढालू बनाई जाती हैं। गरीब किसान ढालू छत के भीतर स्थान का उपयोग कर सकने के लिये अपनी झोपड़ियों को दोतल्ला कर लेते हैं। मिट्टी की दीवारें, फूस की छत और चारों ओर कांटों की ऊंची बाढ़। किसान लोग नीचे के तल्ले में अपने पशु बांध लेते हैं और ऊपर के तल्ले में उन की गृहस्थी रहती है।

मैं झोपड़ी की बाढ़ के मोहरे पर पहुंचा तो कुत्ता मालिक को चेताने के लिये बहुत जोर से भोंका। झोपड़ी का दरवाजा और खिड़की बन्द थे। मेरे कई बार पुकारने और कुत्ते के बहुत उत्तेजना से भौंकने पर झोपड़ी के ऊपर के भाग में छोटी सी खिड़की खुली और झुंझलाहट की ललकार सुनाई दी—"कौन है, इतनी रात गये कौन आया है?"

झोपड़ी के भीतर अंधेरे में से आती ललकार को उत्तर दिया—"मुसाफिर हूं, रास्ता भटक गया हूं। छोटी बच्ची साथ है। पड़ाव के डाक-बंगले पर जाना चाहता हूं।"

खिड़की से एक किसान ने सिर बाहर निकाला और क्रोध से फटकार दिया—"तुम शहरी हो न! तुम आवारा लोगों का देहात में क्या काम? चोरी-चकारी करने आये हो। भाग जाओ नहीं तो काट कर दो टुकड़े कर देंगे और कुत्ते को खिला देंगे।"

किसान को अपनी और बच्ची की दयनीय अवस्था दिखलाने के लिये अपने ऊपर टार्च से प्रकाश डाला और विनती की—"बाल-बच्चेदार गृहस्थ हूं। चोटी पर सूर्यास्त देखने गये थे, भटक गये। पड़ाव के बंगले में बच्चे की मां हमारी प्रतीक्षा कर रही है, बंगले का चौकीदार बता देगा। पड़ाव के डाक-बंगले पर जाना चाहता हूं। रास्ता दिखाकर पहुंचा दो तो बहुत कृपा हो। तुम्हें कष्ट

तो होगा, यथाशक्ति मूल्य चुका दूंगा।"

किसान और भी क्रोध से झल्लाया--"पड़ाव और डाक-बंगला तो यहां से सात मील हैं। कौन तुम्हारे बाप का नौकर है जो इस अंधेरे में रास्ता दिखाने जायेगा। भाग जाओ यहां से, नहीं तो कुत्ते को अभी छोड़ता हूं।"

क्रुद्ध किसान मुझे झोपड़ी की खिड़की से भाग जाने के लिये ललकार रहा था तो झोपड़ी के ऊपर के भाग में दिया जल जाने से प्रकाश हो गया था और वह दिया खिड़की की ओर बढ़ आया था। दिये के प्रकाश में किसान की छोटी घुंघराली दाढ़ी और लम्बी-लम्बी सामने झुकी हुयी मूंछों से ढका चेहरा बहुत भयानक और खूंखार लग रहा था। खिड़की की ओर दिया लाने वाली स्त्री थी।

किसान की बात सुन कर मेरे प्राण सूख गये। समझा कि अंधेरे में बहुत भटक गया हूं। उस अंधेरे, सर्दी और थकान में बच्ची को उठा कर सात मील चल सकना मेरे लिये संभव नहीं था। बच्ची के कष्ट के विचार से और भी अधीर हो गया।

बहुत गिड़गिड़ा कर किसान से प्रार्थना की—"भाई, दया करो! मैं अकेला होता तो जैसे-तैसे जाड़े और ओस में भी रात काट लेता परन्तु इस बच्ची का क्या होगा? हम पर दया करो। हमें कहीं भीतर बैठ जाने भर की ही जगह दे दो। उजाला होते ही हम चले जायेंगे।"

खिड़की के भीतर किसान के समीप आ बैठी औरत का चौड़ा चेहरा भी किसान की तरह ही बहुत रूखा और कठोर था परन्तु उसकी बात से आश्वासन मिला। स्त्री बोली--"अच्छा, अच्छा! उसके साथ बच्ची है। इस समय पड़ाव तक कैसे जायेगा? आने दो, कुछ हो ही जायेगा।"

किसान स्त्री पर झुंझलाया—"क्या हो जायेगा, कहां टिका लेगी इन्हें? शहर के लोग हैं, इनकी मेहमानदारी हमारे बस की नहीं!"

स्त्री ने उत्तर दिया--"अच्छा-अच्छा, नीचे जाकर कुत्ते को पकड़ो, उन्हें आने तो दो!"

किसान ने नीचे आकर झोपड़ी का दरवाजा खोला। कुत्ते को डांट कर चुप करा दिया और हमारे लिये बाड़े का मोहरा खोल दिया। स्त्री भी हाथ में दिया लिये नीचे आ गई थी। किसान और कुत्ता स्त्री के विरोध में असंतोष से गुर्राते जा रहे थे। किसान बोलता जा रहा था--"बड़े शौकीन नवाब हैं सैर करने वाले। चले आये आधी रात में रास्ता भूल कर। कहां टिका लेगी तू इनको?"

स्त्री ने पति को समझाया—"बेचारे भटक कर परेशानी में आ गये हैं तो कुछ करना ही होगा। आने दो, यह लोग ऊपर लेट रहेंगे। हम लोग यहां नीचे फूस डाल कर गुजारा कर लेंगे।"

किसान बड़बड़ाया—"हम नीचे कहां पड़े रहेंगे ? गैया को बाहर निकाल देगी कि मुर्गी को बाहर फेंक देगी ?"

झोंपड़ी के दरवाजे में कदम रखते समय मैंने टार्च से उजाला कर लिया कि ठोकर न लगे। कोठरी के भीतर दीवार के साथ एक गैया जुगाली कर रही थी। टार्च का प्रकाश आंखों पर पड़ा तो गैया ने सिर हिला दिया और अपने विश्राम में विघ्न के विरोध में फुंकार दिया। दूसरी दीवार के समीप उल्टी रखी ऊंची टोकरी के नीचे से भी विरोध में मुर्गी की कुड़कुड़ाहट सुनाई दी। स्त्री ने हाथ में लिये दिये से दीवार के साथ बने जीने पर प्रकाश डाल कर कहा—"हम गरीबों के घर ऐसे ही होते हैं। बच्ची को हाथ पकड़ कर ऊपर ले आओ। मैं रोशनी ले चलती हूं।"

किसान असंतोष से बड़बड़ाता रहा। झोपड़ी के ऊपर के तल्ले में छत बहुत नीची थी। दोनों ओर ढलती छत बीच में धन्नी पर उठी थी। धन्नी के ठीक नीचे भी गर्दन सीधी करके खड़े होना संभव नहीं था। नीची और संकरी खाट पर गंदे गूदड़ सा बिस्तर था। स्त्री ने बिस्तर की ओर संकेत किया—"तुम यहां लेट रहो। हम नीचे गुजारा कर लेंगे।"

स्त्री ने कोने में रखे कनस्तरों और सूखी हांडियों में टटोल कर गुड़ का एक टुकड़ा मेरी ओर बढ़ा कर कहा—"बच्ची को खिला कर पानी पिला दो !" उसने कोने में रखे घड़े से लेकर एक लोटा जल खाट के समीप रख दिया।

स्त्री दिया उठा कर जीने की ओर बढ़ती हुई बोली—"क्या करूं, इस समय घर में आटा भी नहीं है। सांझ को ही चुक गया। सुबह ही पनचक्की पर जाना होगा।"

स्त्री जीने की ओर बढ़ती हुई ठिठक गई। विस्मय से भवें उठा कर बोली—"हैं ! इतनी सी लड़की के गले में मोतियों की कंठी !" उसका स्वर कुछ भीग गया, "हम कुछ करें भी किसके लिये ? लड़का-लड़की घर पर थे तब कुछ हौंसला रहता था। लड़की सियानी होकर अपने घर चली गई। लड़के को शहर का चस्का लगा है। दो बरस से उस का कुछ पता नहीं। जहां हो···हे देवी माता, लोग उस को भी शरण दें।"

स्त्री नीचे उतर गई। तब भी असंतुष्ट किसान के बड़बड़ाने की और कुछ उठाने-धरने की आहट आती रही।

बच्ची थोड़ा गुड़ खाकर और जल पीकर तुरंत सो गई। मुझे गंधाते, गंदे बिस्तर से उबकाई अनुभव हो रही थी। अपनी असुविधा की चिंता से अधिक चिंता थी—डाक बंगले में हमारी प्रतीक्षा में असहाय पत्नी की। हम दोनों के न लौट सकने के कारण वह कैसे बिलख रही होगी। कहीं यही न सोच बैठी हो कि हम भेड़ियों या आततायियों के हाथ पड़ गये हैं। हमें खोजने के लिये डाक-बंगले के चपरासी को लेकर चोटी की ओर न चल पड़ी हो·····।

मस्तिष्क में चिंता की वेदना और पीठ थकान से इतनी अकड़ी हुई थी कि करवट लेने में दर्द अनुभव होता था। झपकी आती तो पीठ के दर्द और बिस्तर की असुविधा के कारण टूट जाती। करवटें बदलता सोच रहा था—रास्ता दिखायी देने योग्य उजाला हो जाये तो उठ कर चल दें।

खिड़की की सांधों से पौ फटती सी जान पड़ी। सोचा—जरा उजाला और हो जाये। नीचे सोये लोगों की नींद में विघ्न न डालने का भी ध्यान था। एक झपकी और ले लेना चाहता था कि नीचे से दबी-दबी फुसफुसाहट सुनाई दी।

मर्द कह रहा था—"···बहुत थके हुये हैं। सूरज बांस भर चढ़ जायेगा तब भी उन की नींद नहीं टूटेगी।"

स्त्री सांस के स्वर में बोली—"तुम्हें उन्हें जगा के क्या लेना है?···नहीं उठते तो मैं जाऊं?"

"अच्छा जाता हूं!"

"आह! संभल कर···। आहट न करो।···गर्दन ऐसे दबा लेना कि आवाज न निकले।···चीख न पड़े। छुरा ताक में है।"

स्त्री-पुरुष का परामर्श सुन कर मेरे रोम-रोम से पसीना छूट गया—हत्यारों से शरण मांग कर उन के पिंजड़े में बन्द हो गया था। सोचा—पुकार कर कह दूं·····मेरे पास जो कुछ है ले लो, लड़की के गले की कंठी ले लो और हमारी जान बख्शो।

फिर मर्द की आवाज सुनाई दी—"बेचारी को रहने दूं, मन नहीं करता।"

स्त्री बोली—"उंह, मन न करने की क्या बात है! उसे रहने देकर क्या होगा! कहां बचाते-छिपाते फिरोगे?"

मैंने आतंक से नींद में बेसुध बच्ची को बाहों में ले लिया। भय की उत्तेजना

से मेरा हृदय धक-धक कर रहा था। सोचा, उन्हें स्वयं ही पुकार कर, गिड़गिड़ा कर प्राण-रक्षा के लिये प्रार्थना करूं परन्तु गले ने साथ न दिया। यह भी ख्याल आया कि यदि वे जान लेंगे कि मैंने उन की बात सुन ली है तो कभी छोड़ेंगे ही नहीं। अभी तो वे बात ही कर रहे हैं। भगवान उन के हृदय में दया दे। सोचा··· यदि किसान के ऊपर आते ही मैं उसे धक्के से नीचे गिरा कर चीख पड़ूं !··· पर जाने आस-पास मील दो मील तक कोई दूसरे लोग भी हैं या नहीं !

सहसा दबे हुये गले से मुर्गी के कुड़कुड़ाने की आवाज आई। स्त्री का उपालम्भ भरा स्वर सुनाई दिया—"देखो, कहा भी था कि संभल कर गर्दन पर हाथ डालना।"

ओह ! यह तो मुर्गी के काटे जाने की मंत्रणा थी। अपने भय के लिये लज्जा से पानी-पानी हो गया।

स्त्री का स्वर फिर सुनाई दिया—"मुर्गी के लिये इतना क्यों बिगड़ रहे हो ? शहर के बड़े लोगों की बड़ी बातें होती हैं। खातिर से खुश हो जायें तो बख्शीश में जो चाहे दे जायं। मामूली आदमी नहीं हैं। लड़की के गले में मोतियों की कंठी नहीं देखी ?"

दूसरी चिंता और लज्जा ने मस्तिष्क को दबा लिया। उस समय मेरी जेब में केवल ढाई रुपये थे। बंगले से सूर्यास्त का दृश्य देखने आया था, बाजार में खरीददारी करने के लिये नहीं। लड़की के गले में कंठी नकली मोतियों की, रुपये सवा की थी। दिये के उजाले में वे देहाती कंठी को क्या परख सकते थे ? बहुत दुविधा में सोच रहा था—इन लोगों को क्या उत्तर दूंगा। कुछ बताये बिना चुपचाप ही कंठी दे जाऊं। बाद में चालीस-पचास रुपये मनीआर्डर से भेज दूंगा।

खिड़की की सांधों से काफी सवेरा हो गया जान पड़ा। सोच ही रहा था, लड़की को जगा कर नीचे ले चलूं कि जीने पर कदमों की चाप सुनाई दी और किसान का चेहरा ऊपर उठता दिखाई दिया।

किसान का चेहरा रात की भांति निर्दय और डरावना न लगा। वह मुस्कराया—"नींद खुल गई ! मैं तो जगाने के लिये आ रहा था। धूप हो जाने पर बच्ची को इतनी दूर ले जाने में परेशानी होगी।" किसान ने पुराने अखबार में लिपटी एक बड़ी सी पुड़िया मेरी ओर बढ़ा दी और बोला, "यह लो, यह तुम्हारे ही भाग्य के थे। घर में आटा भी नहीं था जो दो रोटी बना देते इसीलिये

तो मैं तुम्हें रात में ही हांके दे रहा था पर घरवाली को बच्ची पर तरस आ गया। खेती के लिये जमीन ही कितनी है। अंडे बेच कर ही गुजारा करते हैं। बरसात के अंत में पापी पड़ोसी लोगों की मुर्गियों में बीमारी फैली तो हमारी मुर्गियां भी मर गयीं। मुर्गियां बचाने के लिये सभी कुछ किया। पीर की दरगाह पर दिये जलाये। मुर्गियों को ढेरों लहसुन खिलाया, सरकारी हस्पताल से दवाई भी लाकर दी पर उनका काल आ गया था, बची नहीं। हां यह मुर्गा बड़े जीवट का था। बीमारी झेल कर भी बच गया था। उस के लिये तुम आ गये। एक छोटी सी मुर्गी काल की आंख से बच कर छिप रही थी, वह बच्ची के लिये हो जायेगी। इस समय तुम्हारा तो काम चले, हमारा देखा जायेगा!"

किसान ने पुड़िया मेरे हाथ में दे दी और बोला—"रात के भूखे हो, चाहो तो नीचे चल कर कुल्ला करके मुंह-हाथ धो लो और अभी खा लो। मन चाहे तो रास्ते में खा लेना।"

बच्ची को उठाया। उसने उठते ही भूख से व्याकुलता प्रकट की। दोनों ने अखबार की पुड़िया खोल कर नाश्ता कर लिया।

पेट भर नाश्ता करके मैं संकोच से मरा जा रहा था। किसान और उस की स्त्री ने बहुत आशा से हमारी खातिर की थी। अपने अन्तिम मुर्गा, चूजा भी हमारे लिये काट दिये थे। मैंने संकोच से कहा—"इस समय मेरी जेब में कुछ है नहीं, केवल ढाई रुपये हैं। अपना नाम पता दे दो, मनीआर्डर से रुपये भेज दूंगा।" मैंने बच्ची के गले से कंठी उतार कर स्त्री की ओर बढ़ा दी, "चाहे तो यह रख लो!"

स्त्री कंठी हाथ में लेकर प्रसन्नता से किलक उठी—"हाय, इसे तो मैं मठ में चढ़ा कर मानता मानूंगी। हमारी मुर्गियों पर देवताओं की कोप दृष्टि कभीन हो।"

स्त्री की सरलता मेरे मन को छू गई, रह न सका। कह दिया—"तुम्हें धोका नहीं देना चाहता, कंठी के मोती नकली हैं।"

स्त्री ने कंठी मेरी ओर फेंक दी। घृणा और झुंझलाहट से उंगलियां छिटका कर बोली—"रखो, इसे तुम्हीं रखो। शहर के लोगों से धोखे के सिवा और मिलेगा क्या?"

किसान ठगे जाने से क्रुद्ध हो गया था, वह डाक बंगले का रास्ता बताने के लिये साथ न चला। दिन का उजाला था। हम राह पूछ-पूछ कर बंगले पर पहुंच गये।

पत्नी डाक-बंगले के सामने अस्त-व्यस्त और विक्षिप्त की तरह धरती पर बैठी हुई दिखाई दी। उस का चेहरा ओस से भीगे सूखे पत्ते की तरह आंसुओं से तर और पीला था। आंखें गुड़हल के फूल की तरह लाल थीं। वह बच्ची को कलेजे पर दबा कर चीख कर रोई और फिर मुझ से चिपट-चिपट कर रोती रही।

पत्नी के संभल जाने पर मैंने उसे रात के अनुभव सुना दिये। रात मेरे और बच्ची के असहाय अवस्था में गला काट दिये जाने के काल्पनिक भय में पसीना-पसीना होकर कांपने की बात सुन कर उस ने भी भय प्रकट किया—हाय मैं मर गयी।

पत्नी को बच्ची की कंठी के लिये किसान स्त्री के लोभ और कंठी के विषय में सचाई जान कर उन के खिन्न हो जाने की बात भी बता दी।

पत्नी ने मुझे उलाहना दिया––"उन देहातियों को कंठी के बारे में बता खिन्न करने की क्या जरूरत थी ? कंठी मठ में चढ़ा कर उनकी भावना संतुष्ट हो जाती।"

सोचा, किस भूल के लिये अधिक लज्जा अनुभव करूं––काल्पनिक भय में पसीना-पसीना हो जाने की भूल के लिये या सच बोल देने की भूल के लिये !

●

एक हाथ की उँगलियां

रवि ने पहली वार दर्द की शिकायत की तो मिसेज सैडल, आया और बैरे से वहुत नाराज हुई—घर में तीन-तीन नौकर हैं। एक बच्चा है, उसे भी नहीं संभाल सकते। लड़का दोपहर की कड़कती धूप में भटकता रहा। ये लोग हैं किस लिये ?

मिसेज सैडल ने आया को हुक्म दिया—"फ्रिज से संतरे लेकर वावा को एक गिलास रस दो। यहां हमारे सामने ले आओ, हमारे सामने पिलाओ !"

आया सतिया ने फ्रिज की ओर घूमते हुये सफाई दी—"सरकार हमने तो बावा को वहुत मना किया। वह हमारी तो सुनते ही नहीं। 'डबलू-अम' (असिस्टेंट वर्क्स मैनेजर) साहब के वानी और 'फोरमैन' साहब के कम्मी के साथ गुलेल से पेड़ों में चिड़िया का शिकार करते रहे।" फिर आया मुंह फेर कर होंठों में बड़-बड़ाई, "अभी फागन लगा नहीं, इन के ताईं कड़कती धूप हो गई।"

सांझ को रवि वाथ-रूम में फिर दर्द से चीख उठा। आया दौड़ी हुई गई। वेटे की चीख से मिसेज सैडल घवरा गईं। आया को हुक्म दिया—"बाबा को उस के वेड-रूम में ले जाओ।"

मिसेज सैडल ने लड़के को बहुत ध्यान से देखा। उन के चेहरे पर चिंता की गहरी छाप आ गई। वहुत संकोच और झिझक से लड़के से ऐसे प्रश्न पूछे कि रवि लज्जा और अपराध का आरोप समझ कर चुप हो गया। वह बाथ-रूम में नहीं गया। दर्द को वश में करके चुपचाप लेट गया।

फाटक से कार की गूंज सुन कर रवि समझ गया, डैडी आ गये थे। दो ही मिनट में उस के कमरे के वाहर मम्मी और पापा के कदमों की आहट सुनाई दी। दोनों भीतर आये। रवि को डैडी के सामने पैंट उतार देने के लिये कह दिया गया। लड़के की आंखें लज्जा और अपमान से सुर्ख हो गईं।

रवि नौ बरस का हो गया है। 'बायज स्कूल' के तीसरे फार्म में है। डैडी उसे कभी-कभी मिस्टर रवि पुकार लेते हैं। रवि ने पैंट उतारने से इनकार कर दिया और क्रोध में रो पड़ा।

मिसेज सैंडल ने लड़के को प्यार से समझाया। डैडी ने गम्भीरता से आर्डर दिया। साहब के पीछे खड़ी आया ने पुचकार के संकेत से खुशामद की परन्तु लड़का अड़ गया। उस ने अपमान के विरोध में चुप्पी साध ली। पीड़ा को वश में करने के लिये दांत दबा कर लेट गया।

सैंडल साहब ने अस्पताल में फोन किया। फैक्टरी की बस्ती का बड़ा डाक्टर कैप्टन सितोले तुरन्त साइकिल पर बंगले में हाजिर हो गया। साहब ने डाक्टर को एक ओर ले जाकर बात की।

डाक्टर रवि के कमरे में आ गया और लड़के को मुस्कराकर सम्बोधन किया—"हैलो मास्टर सैंडल" और आत्मीयता से दर्द के विषय में पूछा।

रवि चुप रहा। डाक्टर ने उस का संकोच मिटाने के लिये पीठ पर थापी दी और उसे एक्जामिन करने के लिये पैंट उतार देने के लिये कहा।

रवि फैक्टरी की बस्ती में सब से बड़े साहब का बेटा है। वह किसी से अपमान नहीं सह सकता। उस ने फुंकार कर डाक्टर को डांट दिया—"शट अप्प, गेट अवे!"

डाक्टर ने लड़के को समझा कर प्रश्नों से निदान करना चाहा पर लड़का चुप्पी साधे रहा।

डाक्टर सितोले ने डाक्टर साहब के सामने चिंता और दुख से विवशता प्रकट की। मेम साहिबा और नौकरों से लड़के के खान-पान और व्यवहार के सम्बन्ध में जो सूचना मिल सकी थी, उस से डाक्टर लड़के के कष्ट का कोई कारण जान नहीं सका था।

डाक्टर ने साहब के सामने बहुत झेंप और झिझक से कहा—"....इस आयु के बालक का ऐसा संकोच असाधारण बात है। खाने-पीने की बातों से तो कोई अनुमान नहीं हो सकता। क्षमा कीजिये, शायद बालक कारण बताने में लज्जा अनुभव कर रहा है। कोई इन्फेक्शन (छूत न लग गई) न हो।"

डाक्टर ने और भी अधिक संकोच से कहा—"लेकिन ऐसा इन्फेक्शन केवल डायरेक्ट कंटेक्ट (अंगों के सम्पर्क) से ही हो सकता है।"

सैंडल साहब के माथे पर त्योरियां गहरी हो गईं—"यह संभव कैसे हो सकता

है; लड़का केवल नौ वरस का है।"

डाक्टर ने आँख चुरा कर कहा—"यस सर, मैं स्वयं वहुत उलझन में हूं। ऐसे मामले में लेवरोटरी-टेस्ट जरूरी है लेकिन मेडिकल कालेज हस्पताल में इस से भी कम आयु के वालकों में भी ऐसे इन्फेक्शन के केस आते रहते हैं। अवोध-निर्दोष वालक बहकाने वालों के शिकार हो जाते हैं·····।"

"शायद·····संभव हो!" साहव ने नाराजगी से स्वीकार किया, "लेकिन यहां ऐसी संभावना कहां है?"

सैडल साहव ने 'थैंक्यू' कह कर डाक्टर को चले जाने का संकेत दे दिया और चिंता में माथा पकड़ कर वैठ गये।

रवि कुछ देर वाथ-रूम न जाने के निश्चय में दांत पीसे चुप पड़ा रहा परन्तु फिर रह न सका और वाथ-रूम में जाकर चीख उठा।

सैडल साहव ने छावनी में सैनिक हस्पताल के बड़े डाक्टर कर्नल चौधरी को फोन किया और रवि को उस की मम्मी के साथ गाड़ी में हस्पताल ले गये।

रवि पीड़ा से निढाल हो गया था। कर्नल ने उस के विरोध और रोने-चिल्लाने की परवाह नहीं की। वालक की पैंट उतार साधारण परीक्षा करके सैडल साहव को राय दी—"वालक को तुरंत दिल्ली ले जाइये! हमें टेस्ट के लिये स्लाईड बनाकर हेड-क्वार्टर भेजनी होगी। उस में समय लग जायगा।"

कर्नल चौधरी की स्पष्टवादिता से सैडल साहव की गर्दन झुक गई। उनके आत्म-विश्वास पर आघात लगा और हाथ-पांव ढीले पड़ गये। उन्होंने अपने आपको संभाला। उन के एकमात्र लड़के के जीवन और भविष्य का प्रश्न था। फैक्टरी में लौट कर उन्होंने अगले दिन के लिये सब आर्डर दे दिये। ड्राइवर को हुक्म दिया—तुरंत दिल्ली जाने के लिये गाड़ी में तेल भर, तैयार हो जाये।

दूसरे दिन सुबह आठ ही वजे सैडल साहव गाड़ी में रवि और मिसेज सैडल को लेकर दिल्ली में वच्चों के क्लीनिक में पहुंच गये।

टेस्ट की रिपोर्ट के आधार पर क्लीनिक में रवि के पूरे शरीर की जांच की गई। रक्त को टेस्ट किया गया। टेस्ट की रिपोर्ट के आधार पर क्लीनिक के वड़े डाक्टर ने 'गनोरिया' (उपदंश) के इन्फेक्शन के उपचार के लिये इंजेक्शन तजवीज कर दिये।

सैडल साहव ने आत्म-विश्वास की रक्षा के अंतिम प्रयत्न में गिड़गिड़ा कर डाक्टर के सम्मुख शंका प्रकट की—"क्षमा कीजिये, इस वालक की परिस्थितियों

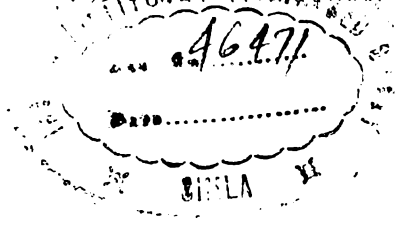

में ऐसी संभावना का अवसर···।"

"यह क्लीनिक है, पुलिस स्टेशन नहीं है। यहां निदान करके इलाज बताया जाता है। इन्फेक्शन की संभावना की तहकीकात करना आप का काम है।" डाक्टर बात समाप्त कर देना चाहता था पर बालक के सम्मानित स्थिति के माता-पिता के चेहरे पर अत्यन्त कातरता देख कर उसने जरा नरम स्वर में कह दिया, "आप सावधान रहते होंगे परन्तु स्त्रियों-लड़कियों में यह रोग अप्रकट रह सकता है। लड़का किसी रोगी बेचैन डायन के हाथ पड़ गया है। हो सकता है, रोगी अपनी बीमारी से स्वयं अनभिज्ञ हो।"

डाक्टर ने दूसरे केस को बुलाने के लिये आदेश देकर सैडल साहब को चले जाने का संकेत कर दिया।

× × ×

सैडल साहब की आंखों के सामने अधर में सरसों फूल गई थी। वैज्ञानिक साक्षी के सन्मुख उन की गर्दन झुक गई थी परन्तु मन उस पराजय को सहज स्वीकार नहीं कर लेता था। उन्होंने अपने संक्षिप्त, विशिष्ट परिवार और एक-मात्र संतान को सर्वसाधारण छोटे लोगों के अस्वास्थ्यकर प्रभाव और कुसंस्कारों से बचाने के लिये क्या नहीं किया था ?

सैडल साहब ने अंग्रेजी अमलदारी समाप्त हो जाने के बाद ही बड़े अंग्रेज अफसर का ओहदा और बंगला पाया है। छोटे अफसर होने के समय भी वे स्वास्थ्य और संस्कृति के विचार से सर्वसाधारण छोटे आदमियों के सत्संग से दूर ही रहना पसंद करते थे। उन के पिता मणीराम सदल, उर्दू लिपि में हस्ताक्षर करते थे। साहब अंग्रेजी में हस्ताक्षर करने लगे। अंग्रेजी में उन के नाम का उच्चारण हो गया—'बी० एन० सैडल'।

सैडल साहब अंग्रेजी अमलदारी में बड़े अंग्रेज अफसर के लिये बनाये गये बंगले में रहते हैं। अंग्रेजों के कायदे-दस्तूर के अनुसार सर्वसाधारण हिन्दुस्तानी लोगों के इन्फेक्शन (संसर्ग) को दूर रखने के लिये, बंगले की इमारत सड़क से एक सौ गज के अन्तर पर है। बंगला कांटेदार तारों और कांटेदार हरी झाड़ियों की ऊंची बाड़ों से घिरा हुआ है। बंगले के सब खिड़कियों और बरामदों पर महीन जाली तनी हुई है। सर्वसाधारण के सम्पर्क में आने वाले मच्छर-

मक्खी भी भीतर प्रवेश नहीं कर सकते। उन के बंगले के मच्छर, मक्खी, मकड़ी अलग हैं।

फैक्टरी की इस्टेट के प्रबन्धक अफसर, बड़े साहब के प्रति आदर के कारण और उन के संतोष के लिये सरकारी डी० डी० टी० और दूसरी जर्ममार औषधियों का अच्छा बड़ा भाग उन के ही बंगले की सीमा में खपा देते हैं। छोटे लोग इन चीजों की कद्र क्या जानें ? वे लोग जर्म-रेज़िस्टेंट (जर्म का प्रभाव सहने के अभ्यस्त) भी हो चुके हैं। साहब के यहां डिब्बे में बन्द विलायती मिठाई या बिस्कुट के अतिरिक्त देसी दूकानों की मिठाई नहीं आती। फल बाजार से आते ही लाल दवाई के पानी में धो दिये जाते हैं।

बंगले के फाटक पर सरकारी वर्दी पहिने चपरासी, लोग-बाग के प्रवेश के निषेध के लिये चौकस रहता है। साहब के धोबी और मेहतर अलग हैं। उन सेवकों के क्वार्टर भी बंगले की विस्तृत सीमा में ही हैं। दफ्तर में प्यास लगती है इसलिये साहब बंगले से थर्मस में पानी ले जाते हैं। उस सड़क पर केवल अन्य तीन सीनियर अफसरों के ही बंगले हैं। छोटे अफसरों के बच्चे मजदूर बस्ती में बहुत अकड़ कर चलते हैं, बड़े अफसरों के बंगले की ओर आने का साहस नहीं करते।

सैंडल साहब के सम्बन्धी प्रायः उतने परिष्कृत स्तर के नहीं हैं। साहब उन से अधिक हेल-मेल नहीं रखते पर कभी कोई सम्बन्धी या बचपन के मित्र बिना निमंत्रण के आ ही जाते हैं। बंगले में अतिथियों के लिये गेस्ट-रूम और गुसलखाना अलग हैं। गेस्ट-रूम के बिस्तर-तौलिये अलग हैं।

रवि जब अढ़ाई बरस का था और तुतला कर बोलता था, उस ने एक दिन साहब के सामने, उल्लू-पठ्ठा, उल्लू-पट्ठा कह दिया था। मिसेज सैंडल झेंप से धरती में गड़ गईं थीं। साहब ने बहुत चिंता से अंग्रेजी में जवाब-तलब किया था—लड़के ने यह कहां से सीखा ? बच्चे को हवाखोरी के लिये कौन ले जाता है, कहां ले जाया जाता है ?

रवि बोलना सीखते-सीखते ही यह भी सीख गया था कि मम्मी और डैडी के सामने क्या नहीं बोलना चाहिये ! बालक को सीखने के लिये अति आतुर जिज्ञासु प्रवृत्ति ने भांप लिया था कि डैडी और मम्मी उसे अनेक विषयों से अजान बनाये रखना चाहते थे। बंगले से बाहर और नौकरों के सामने वह सब लोगों की तरह स्वच्छंदता से गाली देने का मजा ले सकता था परन्तु मम्मी-डैडी

के सामने वैसे शब्द उस की जिह्वा पर न आते। इतनी चौकसी से सुरक्षित बड़े साहब के लड़के को ऐसा इन्फेक्शन लग गया। बच्चे को ऐसा रोग हो जाने मे मामूली क्लर्क और चपरासी का भी सिर झुक जाता।

सैडल साहब ने न कभी भगवान की सत्ता में संदेह किया है, न कभी वे भगवान के भरोसे रहे हैं। अपने परिवार के स्वास्थ्य और विशिष्टता की रक्षा के लिये वे स्वयं सतर्क रहे हैं। उन की सब सतर्कता और प्रयत्न विफल हो गये। साहब बेबसी में भगवान को गुहारने लगे—यह सब कैसे हो गया ?

सैडल साहब दिल्ली जाते समय मानसिक व्यथा और चिंता में मौन थे। लौटते समय वे भी परास्त थे। उनका शरीर पूरी रात की अनिद्रा और थकावट से चूर-चूर था परन्तु चिंता के बोझ के कारण जम्हायी भी नहीं ले सके। उन की सुर्ख आंखें निष्पलक थीं। सड़क के किनारे के एक गांव को पहचान कर उन्होंने घड़ी देख ली—फैक्टरी तक बीस मिनट का ही मार्ग शेष था।

रवि नींद से मम्मी की बगल में लुढ़का हुआ था। मिसेज सैडल आखें मूंदे थीं परन्तु उनकी सांस में नींद का सुर नहीं था। साहब ने अंग्रेजी में पूछ लिया—"डाक्टर कहते हैं, बिना डायरेक्ट कन्टेक्ट के संभव नहीं पर इन्फेक्शन आया कहां से। अबोध बालक को ऐसी घृणित संगति मिली कहां से ? किसने उस पर यह अत्याचार किया है ?"

मिसेज सैडल आंखें नहीं खोल सकीं। मुंदी हुयी बरौनियों में आंसुओं की नमी चमक आयी। उन्होंने गहरा सांस ले लिया—"भगवान ही जानते हैं !"

मिसेज सैडल की स्मृति में दो बरस पहले की एक घटना मंडरा रही थी। उनकी मां ने घर की भैंस का घी और देसी शक्कर अपने भांजे के हाथ उनके लिये भिजवाई थी। उनका ममेरा भाई हरिद्वार तीर्थ-यात्रा के लिये जाते समय सौगात पहुंचा देने के लिये उनके यहां होकर गया था। ठंडी रमणीक जगह देख कर चार-पांच दिन के लिये वह ठहर गया था।

सैडल साहब फैक्टरी में थे। मिसेज सैडल रवि को स्कूल में छोड़ कर, उसके कपड़े दर्जी के यहां देने के लिये गाड़ी में बाजार चली गयी थीं। बंगले पर लौटीं तो आया ने उनके सामने आकर सिर पीट लिया। आया ने रो-रो कर बताया—वह जरा हस्पताल चली गई थी। अपनी ग्यारह बरस की बेटी गुनिया को गेस्ट-रूम का फर्श फिनाइल से पोंछ देने के लिये कह गई थी। लौटी तो लड़की सुबक-सुबक कर रो रही थी।···लड़की की ऐसी हालत थी···बिरादरी

उसकी क्या फजीहत करेगी···लड़की का क्या होगा ?

मिसेज सैंडल लज्जा और परिताप से धरती में गड़ गई थीं। क्या कर सकती थीं ? उन्होंने बहुत समवेदना से आया को चुप कराया। क्रोध में कहा—ऐसे लोगों को तो गोली मार देनी चाहिये। अभी जूते लगवा कर यहां से निकलवाती हूं। तू अपनी बदनामी और बच्ची के कलंक का ख्याल कर चुप रह। उन्होंने आया के हाथ में लड़की की दवा-दारू की जरूरत के लिये और उसे शांत करने के लिये पचास रुपये दे दिये थे।

मिसेज सैंडल का सिर घृणा और क्रोध की पीड़ा से फटा जा रहा था। साहब फैक्टरी से लौटने ही वाले थे। उनके सामने वह अपने ऐसे सम्बन्धी के बारे में क्या जवाब देंगी ? आहट पाकर उनकी आंखें उठीं। मेहमान टांगे पर अपना असबाब लिये बंगले से चला जा रहा था। उन्होंने भगवान को धन्यवाद दिया—तुम्हीं रक्षक हो, तुम्हीं सहायक हो। उन्होंने बहुत यत्न से अपने आपको संभाला। लंच पर साहब से केवल इतनी चर्चा हुई कि मेहमान चला गया था। साहब को ऐसे मेहमान से कोई सरोकार नहीं था।

गाड़ी में सैंडल साहब की बगल में बैठी मिसेज सैंडल का सिर अनिद्रा और थकान से फटा जा रहा था। दो बरस पूर्व आया सतिया के फूट-फूट कर रोने की घटना के साथ घृणित रोगों और उनके उपचार के सम्बन्ध में सुनी हुयी मूर्खतापूर्ण घृणित बातें याद आ रही थीं। रोग तो दो बरस से उनके बंगले में मौजूद था। दो बरस से वे क्यों चुप थीं ? पति के सामने उस चुप्पी के लिये क्या उत्तर दे सकती थीं ? भगवान ने उनके उस पाप का दंड एक-मात्र बेटे को दिया था।

मिसेज सैंडल की बगल में बैठे पति की स्वगत गुर्राहट सुनाई दे गई—ऐसे जालिम पापी का पता लगाये बिना, उसे दंड दिये बिना नहीं छोड़ूंगा।

मिसेज सैंडल के वेदना और चिंता से फटते सिर पर एक और आशंका का पहाड़ गिर पड़ा। उनका सूखा हुआ गला और भी सूख गया।

× × ×

फैक्टरी के मजदूरों के क्वार्टरों में, अफसरों के नौकरों के क्वार्टरों में और पूरी इस्टेट में सनसनी फैल गई—इस्टेट में सब लोगों की डाक्टरी होगी।

तरह-तरह की अफवाहें थीं। कोई कहते थे—हेडक्वार्टर से आर्डर आया है कि इस्टेट के सब मर्द, औरतों, बच्चों की कपड़े उतार कर डाक्टरी होगी। कोई लोग कहते थे—बड़े साहब के लड़के को इस्टेट से खराब बीमारी लगी है। बड़े साहब ने हुक्म दिया है—बीमारी वाले आदमी बर्खास्त किये जायेंगे।

मजदूरों में विरोध का बवंडर उठने लगा—ऐसे बेइज्जती नहीं सहेंगे।··· पहले अफसरों और उनके घर की औरतों की डाक्टरी मजदूरों के सामने कराई जाये तब मजदूरों की डाक्टरी होगी!

अफसरों को सपरिवार गालियां दी जाने लगीं—हस्पताल की सब दवाइयां खा जाते हैं।···मजदूरों की हवा से दूर बंगलों में रहते हैं। मजदूर तो इनके बंगलों के नजदीक भी नहीं फटक सकते। ये अपनी बीमारी और मैला मजदूरों के यहां फिकवा कर मजदूरों को बीमारी देते हैं। ओहदे और पैसे के जोर पर दुनिया भर के कुकर्म करते हैं। मजदूर इन्हें क्या बीमारी देंगे?

फैक्टरी मजदूर यूनियन की ओर से विरोध हुआ—फैक्टरी में भर्ती के समय सब मजदूरों की डाक्टरी हो चुकी है। हमारे घरों की औरतें सरकारी नौकर नहीं हैं। फैक्टरी को हमारी औरतों की डाक्टरी से क्या मतलब? कोई हमारी औरतों की डाक्टरी करेगा तो खून बह जायगा! बताया जाये, किस कानून से हमारे घरों में डाक्टरी कराई जा सकती है!

अफसरों के नौकर भी बड़बड़ाने लगे—हमारे ही सिर पर तो अफसरों की सफाई, तंदरुस्ती और आराम है। हम इनका गन्दा उठायें, मैला धोयें, बीमारी में खिदमत करें! बीमारी इनकी हमें लगेगी या हमसे इन्हें लगेगी?

मिसेज सैंडल को खबर मिली, सतिया कह रही थी—हम क्या जानें इन बड़े लोगों के घर में कैसी बीमारियां होती हैं? बड़े लोग चाहे जिसकी इज्जत मिट्टी कर दें और मुंह सी दें! कुंवारी लड़कियों की डाक्टरी कैसे हो सकती है! हमने खिदमत करने की नौकरी की है सो खिदमत करवा लें। अपनी बेइज्जती, बदनामी करवाने के लिये नौकरी नहीं की है।

मिसेज सैंडल कलेजे पर पत्थर रक्खे मौन थीं। जानती थीं, साहब किसी बात पर अड़ जाते हैं तो किसी की नहीं सुनते। सोचतीं—भगवान को जो मंजूर है। जाने किस अपराध का दंड दे रहे हैं?

फैक्टरी की मजदूर यूनियन ने प्रस्ताव पास कर दिया—फैक्टरी मजदूरों के घरेलू मामलों में दखल देगी तो स्ट्राईक होगी। इस मामले में फैक्टरी के

दो हजार मजदूर और डेढ़ सौ क्लर्क एक होकर, लाल झंडा लेकर फैक्टरी में प्रदर्शन करने लगे ।

स्ट्राईक के प्रस्ताव का समाचार पाकर सैडल साहब के पांव लड़खड़ा गये । कानून और हेडक्वार्टर का समर्थन होने पर वे कभी न दबते परन्तु उस हड़ताल की धमकी उनके आर्डर के विरोध में थी । फैक्टरी में हड़ताल की रिपोर्ट और उसका ब्यौरा हेडक्वार्टर और मिनिस्ट्री तक भेजना होगा । हड़ताल सुपरिटेंडेंट की प्रबंध-विषयक अयोग्यता की प्रमाण होती । उस पद से ही तो सैडल साहब का विशिष्ट अस्तित्व है ।

सैडल साहब ने गलतफहमी दूर करने के लिये मजदूर नेताओं को बुला कर बात की—"भाइयो, फैक्टरी की ओर से मजबूरी में डाक्टरी की जाने का कोई आर्डर नहीं है । आर्डर हस्पताल के लिये है कि जो भाई किसी तरह की डाक्टरी कराना चाहते हैं, उनकी तुरंत डाक्टरी की जाये और उनका मुफ्त और गुप्त इलाज किया जाय । मजबूरी किसी के लिये नहीं है ।

"यह प्रबंध हम और आप लोगों की भलाई के लिये, हमारे बाल-बच्चों की भलाई के लिये, सोशल वैलफेयर (समाज) के लिये है । हम लोगों का क्या है, हम लोगों की उम्रें तो खतम हो रही हैं । हम सब को अपने बच्चों का ख्याल करना चाहिये । हमारे देश का भविष्य तो उन्हीं पर निर्भर करेगा । हमारे समाज में कहीं भी रोग रहेगा तो हम सब लोगों के लिये, पूरे समाज के लिये, हमारे बच्चों के लिये खतरा रहेगा । समाज के संकट से कोई नहीं बच सकता । हम सब एक ही हाथ की छोटी-बड़ी उंगलियां हैं । सब उंगलियां मिल कर ही मुट्ठी बनती है ।"

सैडल साहब के आश्वासन से मजदूरों की गलतफहमी दूर हो गई । डाक्टरी से अपमान का भय दूर हो गया । स्ट्राइक का बवंडर शान्त हो गया । इस्टेट में सन्तुष्ट मजदूर साहब की प्रशंसा करने लगे ।

आया सतिया संध्या समय सुरती के लिये तम्बाकू की पत्ती लेने मुछई की दुकान तक गई थी । दुकान पर भी साहब की प्रशंसा हो रही थी—इतने बड़े आदमी हैं पर कह रहे थे, हम सब भाई-भाई हैं, हम सब एक ही हाथ की छोटी-बड़ी उंगलियां हैं । सब उंगलियां बंध कर ही मुट्ठी बंधती है···।

सतिया ने बात सुनते-सुनते सुरती बना कर फांक ली थी । मुंह में सुरती संभाले रहने के लिये ठुड्डी उठा कर बोली—"हां, उंगली हथेली पर झुके नहीं

तो मुट्ठी नहीं बंधती। तुम जानो, एक उंगली ललकारने को होती है और कोई उंगलियां अंजली पसारने के लिये।"

सतिया ने जानकारी में आंखें मटकाईं जैसे वह बड़े साहब की आया होने की स्थिति से अधिक जानती थी। उसने साहब की प्रशंसा पर पिच्च से पीक थूक दी और गर्व से गर्दन टेढ़ी कर चली गई।

●

आत्मज्ञान

महाराज जनक विदेह थे। उनके प्रभाव से मैथिल राज्य और जनकपुरी के साधारण जन-समाज में भी अनाशक्ति और आध्यात्म साधना की प्रवृत्ति बढ़ रही थी। जनकपुरी के प्रमुख सेठ क्षेमक संसार से अनासक्त रह कर संसार चलाते थे। क्षेमक के व्यापारी सार्थ कपिशा से कामाक्षा तक और त्रिगर्त से लंका तक चलते थे। क्षेमक व्यवसाय से विपुल अर्थ का संचय कर, अर्थ को यज्ञ में दान करके विपुल पुण्य का अर्जन करते थे। क्षेमक के लिये अर्थ, मोक्ष का साधन-मात्र था।

एक प्रातः क्षेमक के दास दर्पण के सम्मुख उनका प्रसाधन कर रहे थे। सेठ को ध्यान आया कि उनके सिर में श्वेत केशों की मात्रा बहुत बढ़ गयी है। सोचा—गृहस्थ और अर्थोपार्जन की चिन्ता से विराम लेने का समय आ गया।

सेठ क्षेमक का एक ही पुत्र था। सेठ ने अपने पुत्र भद्रक को यज्ञोपवीत ग्रहण करने के पश्चात् गुरुमुख से ज्ञान-प्राप्ति के लिये महर्षि महिधर के आश्रम में भेज दिया था। सेठ ने आयु की तीसरी अवस्था आ गयी जानकर पुत्र को जनकपुरी बुलवा लिया और उसे अपने वंश के व्यवसाय से अर्थोपार्जन की शिक्षा देने लगे। पुत्र के लिये श्रेष्ठ कुल की लावण्यवती कन्या खोज कर पुत्र का विवाह भी कर दिया।

सेठ के पुत्र भद्रक की प्रवृत्ति गृहस्थ और धन-उपार्जन की ओर न हुई। वह भोग और अर्थोपार्जन की ओर ध्यान ही न देता था। एकान्त में बैठा आत्मचिन्तन और मनन में ही लीन रहता।

सेठ के हर्म्य की सुन्दर दासियां, सम्भ्रांत कुल की रीति के अनुसार सेठ के युवा पुत्र के शरीर पर चन्दन का लेप करना चाहती थीं। भद्रक उनसे इस

प्रकार मुंह मोड़ लेता मानो वे उसके शरीर पर मार्ग का कीचड़ पोत रही हों। दासियां उस के आहार के लिये उत्तमोत्तम व्यंजन प्रस्तुत करतीं। भद्रक उन्हें हाथ न लगाता।

भद्रक की नवयौवना, लावण्यवती पत्नी रात्रि में सुन्दरी दासी के हाथ में गंध-माल्य लेकर प्रस्तुत होती तो भद्रक शयन-कक्ष छोड़कर बरसती ओस में घास पर जा बैठता।

सेठ क्षेमक पुत्र को उपदेश देते—यौवन और गृहस्थ में वैराग्य, धर्म और नीति के विरुद्ध है।

भद्रक पिता को उत्तर देता—"हे पिता, मोक्ष ही चिन्तनीय है। मोक्ष को देह नहीं, आत्मा प्राप्त करती है इसलिये आत्मा ही चिन्तनीय है। शारीरिक अनुभूति में आसक्ति आत्मा की उपेक्षा है। हे तात्, शारीरिक भोग का आकर्षण दीप-शिखा के समान है। जीव-रूपी शलभ उसके आकर्षण में अपने अस्तित्व को खो बैठता है और पुनः दीप-शिखा में जलने के लिये शलभ का शरीर धारण करता है। आत्मा के इस आवागमन से क्या लाभ ?"

भद्रक के वैराग्य से क्षेमक को बहुत चिन्ता हुई। सेठ सोचने लगे—गृहस्थ में सन्यास की भावना आश्रम-धर्म का विरोध है। अवसर के विरुद्ध धर्म, स्वयं धर्म का क्षय करता है जैसे पात्र के नीचे अग्नि भोजन को पकाती है परन्तु पात्र में डाल दी गयी अग्नि भोजन को नष्ट कर देती है। पुत्र की ऐसी भावना है तो उनके वंश-धर्म का पालन कैसे होगा ? कर्मकांड और यज्ञों का अनुष्ठान न होने से पितर और देवता अतृप्त रहेंगे। काम और अर्थ के धर्म के अभाव में मोक्ष भी अप्राप्य रहेगा। इससे जन की हानि होगी, इहलोक का अकल्याण होगा और परलोक का भी क्षय होगा।

सेठ क्षेमक अपने पुत्र का विभ्रम दूर करने के लिये उसे लेकर विदेह मार्ग और कर्मकांड के उपदेष्टा, राजगुरू महर्षि सदानन्द के आश्रम में गये और महर्षि से अपने पुत्र का भ्रम दूर कर उनके वंश, कर्म और संसार की रक्षा के लिये प्रार्थना की।

राजगुरू महर्षि सदानन्द ने भद्रक को उपदेश दिया—"हे सौम्य, धर्म ही मोक्ष का मार्ग है। सत्य ही धर्म है। स्थिति ही सत्य है। देह भी है और आत्मा भी है। देह के धर्म से आत्मा के धर्म की पूर्ति होती है। इस धर्म का अनुष्ठान ही यज्ञ है। यज्ञ का धर्म ही कर्मकांड है। यज्ञ की पूर्ति ही मोक्ष है।"

सतत् मनन और चिन्तन से भद्रक का तर्क कुशाग्र हो गया था। भद्रक ने शील और विनय से महर्षि के सम्मुख अपनी शंका निवेदन की—"परम ज्ञानी उपदेश करें, चरम लक्ष्य कर्म है या मोक्ष ?"

महर्षि ने विचार कर उत्तर दिया—"सौम्य, चरम लक्ष्य मोक्ष है।"

भद्रक ने प्रश्न किया—"परम ज्ञानी उपदेश करें, मोक्ष शरीर पाता है अथवा आत्मा ?"

महर्षि ने उत्तर दिया—"वत्स, मोक्ष आत्मा प्राप्त करती है।"

भद्रक ने फिर प्रश्न किया—"हे परम ज्ञानी, उपदेश करें, नश्वर भौतिक शरीर मुख्य और चिन्तन है अथवा अविनाशी आत्मा ?"

महर्षि ने स्वीकार किया—"मुख्य तो अविनाशी आत्मा ही है परन्तु अविनाशी आत्मा की कर्म से निवृत्ति ही मोक्ष है। कर्म की पूर्ति के बिना उससे निवृत्ति नहीं अतः वत्स, मोक्ष का मार्ग कर्म की पूर्ति द्वारा उससे निवृत्ति ही है।"

भद्रक ने महर्षि के सम्मुख उपस्थित जिज्ञासु समाज को संबोधन किया—"मोक्ष की इच्छा करने वाले सत्य को पहचानें! नश्वर की चिन्ता में अविनाशी को लिप्त करना केवल भ्रम-मात्र है। कर्म से निवृत्ति के प्रयोजन से कर्म को ग्रहण करना भार को केवल फेंक देने के लिये उठाना है। यह निष्फल मार्ग है।"

राजगुरु सदानन्द के मुख पर विद्रूप की मुस्कान आ गई। उन्होंने भद्रक को कोई उत्तर न दिया।

राजगुरु महर्षि सदानन्द के आश्रम के अनेक ऋषि और ब्रह्मचारी भद्रक से शास्त्रार्थ करने के लिये आगे बढ़ आये।

भद्रक ने बाहु उठाकर उनसे एक ही प्रश्न किया—"ज्ञानी गण उत्तर दें, शरीर मुख्य है अथवा आत्मा ?"

अधिकांश ऋषि और ब्रह्मचारी समुचित उत्तर के विचार में मौन रह गये परन्तु कुछ उतावले शिष्य तुरन्त बोल उठे—"आत्मा!"

भद्रक ने उन्हें सम्बोधन किया—"हे ज्ञानी गण, सत्य ही आत्मा मुख्य है। अविनाशी निर्मल आत्मा को कर्मकांड के कर्दम में लिप्त करने से क्या लाभ ? आत्मा के अविनाशी, निर्मल, निर्लेप गुण को पहचानो—वही विदेह मार्ग है। कर्मकांड के कर्दम में आत्मा को लिप्त करना मोह का मार्ग है।"

भद्रक ने प्रतिज्ञा की कि वह अविनाशी, निर्लेप आत्मा की प्रतिष्ठा द्वारा विदेह के सत्य मार्ग की स्थापना करेगा। इस प्रयोजन से उसने ज्ञान का दिग्विजय

करने का व्रत ले लिया । उसने गृहस्थ त्याग दिया ।

सेठ क्षेमक ने अपने मन को समझाया—संसार के नियंता देवों को जो स्वीकार है, वही होगा । यदि देवों को अपनी पूजा, तुष्टि ओर मेरे वंश-धर्म की रक्षा स्वीकार है तो वे स्वयं मेरे पुत्र का भ्रम नष्ट करेंगे ।

उस युग में सब से प्रसिद्ध आत्मद्रष्टा महर्षि याज्ञवल्क्य की व्यवस्था ही प्रमाण मानी जाती थी । महर्षि याज्ञवल्क्य का एक आश्रम कौशल और मिथिला राज्यों की सीमा पर, नैमिषारण्य में भी था । उस वर्ष महर्षि नैमिषारण्य आश्रम में ही थे । भद्रक महर्षि याज्ञवल्क्य से व्यवस्था पाने का मनोरथ लिये नैमिषारण्य पहुंचा ।

भद्रक ने नैमिषारण्य के आश्रम में पहुंच कर महर्षि याज्ञवल्क्य से आत्मा, शरीर और मोक्ष के सम्बन्ध में ज्ञान की प्रार्थना की ।

महर्षि ने भद्रक के अध्ययन, तप और अनुभव का अनुमान करने के लिये उसे आपाद मस्तक देखा, उसकी आयु का विचार किया और आदेश दिया—"नवयुवक जाओ, ऋषि श्वेतकेतु से ज्ञान-लाभ करो ।"

नैमिषारण्य के आश्रम में ऋषि श्वेतकेतु, आत्मज्ञान-मार्तण्ड महर्षि याज्ञवल्क्य के प्रमुख शिष्य और आत्मज्ञान के प्रमुख वक्ता थे । वही आश्रम के उपकुलपति थे । अध्ययन और मनन के प्रभाव से उनके केशों और श्मश्रु पर से भी कालिमा दूर हो चुकी थी । भद्रक ने महर्षि श्वेतकेतु से आत्मज्ञान के लिये प्रार्थना की ।

ऋषि श्वेतकेतु ने भद्रक से महर्षि सदानंद के आश्रम में प्राप्त किये ज्ञान और उसके चिन्तन के विषय में संक्षेप में प्रश्न किये और आदेश दिया कि वह उनके शिष्य मुनि उद्धव से ज्ञान प्राप्त करे ।

मुनि उद्धव ने भद्रक को ज्ञान देना स्वीकार किया । भद्रक छः मास तक मुनि उद्धव की पचास गौओं की सेवा करता हुआ निरन्तर आत्मज्ञान के सम्बन्ध में मनन करता रहा ।

मुनि उद्धव ने भद्रक की ज्ञान-पिपासा की परीक्षा की । भद्रक की सेवा से संतुष्ट हो मुनि ने उसके सम्मुख कई दिन आत्मा के अणु और विभु गुणों की व्याख्या की । मुनि ने कर्मकांड द्वारा आत्मा के ब्रह्म में सानिध्य से मोक्ष प्राप्ति का उपदेश दिया ।

भद्रक ने मुनि उद्धव का सम्पूर्ण उपदेश सुन कर प्रार्थना की—"ज्ञानधन

मुनि निर्णय करें, आत्मा मुख्य है अथवा शरीर मुख्य है ?"

मुनि उद्धव ने उत्तर दिया—"भद्र, कोई मुख्य और कोई अमुख्य नहीं है। आत्मा और शरीर का सायुज्य ही समाधान और मुक्ति का मार्ग है।"

भद्रक का समाधान नहीं हुआ। उसने पुनः ऋषि श्वेतकेतु की शरण ली। ऋषि श्वेतकेतु ने पुनः उसी ज्ञान का प्रवचन किया और मुनि उद्धव के ज्ञान को सत्य बताया।

भद्रक ने ऋषि श्वेतकेतु के सम्मुख निवेदन किया—"ऋषि उपदेश करें, आत्मा मुख्य है अथवा शरीर मुख्य है ? मोक्ष किसका होता है ?"

ऋषि श्वेतकेतु ने उत्तर दिया—"कोई मुख्य नहीं है, कोई अमुख्य नहीं है। जीव आत्मा और शरीर का सायुज्य है। कर्मकाण्ड जीव का धर्म है। धर्म की निष्पत्ति से मोक्ष होता है।"

भद्रक ने आग्रह किया—"शरीर से पूर्व भी आत्मा का अस्तित्व होता है। शरीर पात हो जाने के पश्चात् भी आत्मा अक्षय रहता है। मोक्ष शरीर नहीं, आत्मा प्राप्त करता है। ऋषिवर स्वीकार करें, आत्मा ही मुख्य है।"

श्वेतकेतु ने फिर व्याख्या की—"आत्मा अशरीर होकर मोक्ष की कामना और साधना नहीं कर सकता। शरीर ही आत्मा की चिन्ता करता है। शरीर से ही आत्मा लभ्य है इसलिये सायुज्य ही सत्य है। मुख्य-अमुख्य का प्रश्न वितण्डा है।"

भद्रक का समाधान न हुआ। वह महर्षि याज्ञवल्क्य की कुटिया के द्वार पर जा बैठा। महर्षि का कृपा-कटाक्ष पाकर भद्रक ने अपनी द्विविधा कही—"तपोधन, मुनि उद्धव और ऋषि श्वेतकेतु मेरी ज्ञान पिपासा को संतुष्ट नहीं कर पाये। महर्षि मेरा उद्धार करें।"

महर्षि याज्ञवल्क्य ने भद्रक को अपनी शंका निवेदन करने की अनुमति दी।

भद्रक ने महर्षि के आसन के सम्मुख प्रणाम कर निवेदन किया—ज्ञानधन, परम महर्षि उपदेश दें, आत्मा मुख्य है अथवा शरीर मुख्य है ?"

अन्तर्द्रष्टा महर्षि ने भद्रक के नेत्रों में देखकर उत्तर दिया—"शरीर मुख्य है।"

भद्रक मूढ़ की भांति अवाक् रह गया। महर्षि की ओर कुछ पल देख कर बोला—"तपोधन, शरीर तो नश्वर है।"

महर्षि ने उत्तर दिया—"शरीर नश्वर है परन्तु वही मुख्य है।"

भद्रक ने प्रार्थना की—"तपोधन ऐसा उपदेश किसी ज्ञानी ने नहीं दिया।

महर्षि इस नये ज्ञान की व्याख्या करें।"

महर्षि ने प्रश्न किया—"सौम्य, तू ज्ञान को प्रत्यक्ष अनुभव के प्रमाण से चाहता है अथवा शब्द प्रमाण से।"

भद्रक ने विचार कर उत्तर दिया—"महर्षि प्रत्यक्ष अनुभव द्वारा ही ज्ञान देने की कृपा करें।"

महर्षि ने करुणा से मुस्कराकर उत्तर दिया—"सौम्य, ऐसे अवसर के लिये प्रतीक्षा करो।"

एक दिन प्रातः अग्निहोत्र के उपरांत महर्षि ने भद्रक को स्मरण कर आदेश दिया—"वत्स, आज हमें काले खजूर का स्वाद लेने की इच्छा है। जहां से मिले काले खजूर का फल गुरू के लिये प्रस्तुत करो।"

सभी जानते थे कि काले खजूर के वृक्ष केवल सिद्ध हिरण्य के आश्रम में ही थे। आश्रम निवासियों ने भद्रक के लिये महर्षि का आदेश सुना तो भय से सिहर उठे। सिद्ध हिरण्य मायावी और तांत्रिक था। वह अपनी साधना के लिये नर-बलि देता था। वह मनुष्यों को पशु रूप देकर उनके मांस का भी आहार करता था। भद्रक ने प्राणों की आशंका की भी चिन्ता न की। वह महर्षि के आदेश से सिद्ध हिरण्य के आश्रम की ओर चल पड़ा। वह ज्ञान के लिये तप कर रहा था। गुरू के आदेश की पूर्ति ही सबसे बड़ा तप था।

भद्रक भय की चिन्ता न कर मायावी हिरण्य के आश्रम में चला गया। फलों से लदे काले खजूर का वृक्ष देख कर वह उस पर चढ़ गया। भद्रक ने खजूर का एक गुच्छा तोड़ लिया।

अपनी कुटी में बैठे हिरण्य ने फल तोड़ने की आहट पायी। उसकी दृष्टि भद्रक की ओर चली गयी।

हिरण्य ने पल भर सोचा और मंत्र-शक्ति से आदेश दिया—"कच्छप बन कर नीचे पृथ्वी पर गिर जा।"

भद्रक का शरीर तुरन्त कछुये का हो गया और वह वृक्ष पर से गिरने वाले नारियल की भांति टप से पृथ्वी पर गिर पड़ा। भद्रक का शरीर कछुये की खपड़ी में सुरक्षित था। इतनी ऊंचाई से गिरने पर भी उसका अंग-भंग नहीं हुआ।

मायावी हिरण्य एक रस्सी हाथ में लिये कच्छप रूप भद्रक के समीप गया। मायावी ने मंत्र शक्ति से कच्छप को बकरा बन जाने का आदेश दिया। भद्रक बकरा बन गया। हिरण्य ने बकरे के गले में रस्सी डालकर उसे अपनी कुटिया

के पिछवाड़े, बलि के काष्ठ से बांध दिया ।

बकरे के रूप में भद्रक असहाय था । गले में रस्सी बंधी थी । वह बलि-काष्ठ के चारों ओर चक्कर लगाता हुआ मिमिया-मिमिया कर गुरू को पुकार रहा था । इस यातना में आत्मज्ञान की जिज्ञासा भूल कर वह अपने गले पर मायावी के खड्ग के प्रहार की आशंका में कांप रहा था ।

× × ×

तपोधन महर्षि याज्ञवल्क्य ने अपने आश्रम में बकरे के कंठ से अपने असहाय शिष्य की पुकार सुनी । योग बल से सब कुछ जान लिया । कुछ समय तक कोई आशंका न देख भद्रक को बकरे के रूप में ही रहने दिया ।

बकरे का शरीर धारणा किये भद्रक के सामने बेर की पत्ती डाल दी गयी थी और एक कुंड में जल रख दिया गया था । कुछ समय पश्चात बकरे के शरीर के गुण, स्वभाव से विवश हो उसने कुंड से जल पिया और बेर की पत्ती भी चर ली । भद्रक देव की इच्छा के सम्मुख आत्मसमर्पण कर चारों खुर समेट कर बैठ गया और जुगाली करने लगा ।

उचित समय जान कर अपने आश्रम में बैठे महर्षि याज्ञवल्क्य ने बकरे के रूप में बंधे हुए भद्रक पर से मायावी हिरण्य की मंत्र-शक्ति का उच्चाटन कर, अपनी मंत्र-शक्ति से उसे फिर मनुष्य का रूप दे दिया ।

भद्रक ने चार खुरों के स्थान पर दो हाथ और दो पांव पा लिये । उसने तुरन्त अपने गले की रस्सी खोल डाली । वह मायावी हिरण्य के आश्रय से भागता हुआ महर्षि याज्ञवल्क्य के आश्रम में पहुंच गया । भद्रक बहुत वेग से भागते आने के कारण हांफ गया था । उसने महर्षि के चरणों में सिर रख दिया ।

महर्षि याज्ञवल्क्य ने ध्यान भंग होने पर वेग से सांस लेते हुये भदक की ओर देखा और फिर प्रश्न किया—"क्यों रे, तू इतने समय तक कहां था ? काले खजूर का फल लाया ?"

भद्रक गुरू का आदेश पूर्ण न कर सकने के अपराध की आशंका से कांप उठा । क्षमा की भिक्षा के लिये हाथ जोड़कर उसने हांफते हुये निवेदन किया—"तपोधन, सेवक तो मायावी के जाल से बकरे के शरीर में बंदी बनकर असहाय हो गया था ।"

"अरे, तू बकरे के शरीर में था तो क्या हुआ ?" महर्षि ने भृकुटी वक्र कर प्रश्न किया। "तेरी आत्मा तो वही सुपुरुष भद्रक की ही थी। बोल थी या नहीं ?"

"सत्य है तपोधन, आत्मा तो वही थी। चराचर में एक ही आत्मा है।" भद्रक ने स्वीकार किया।

"बता, तूने क्या अनुभव किया ? आत्मा मुख्य है या शरीर ? संसार और मोक्ष की साधना आत्मा से करेगा अथवा शरीर से ?"

भद्रक ने कृतार्थ होकर महर्षि की चरण धूलि ली और सब शंका छोड़कर अपने वंश का धर्म संभालने के लिये जनकपुरी लौट गया।

●

अपमान की लज्जा

बम्बई में प्रातः भ्रमण के लिये 'जुहू' का समुद्र तट अधिक अच्छा है या 'पाली हिल' का समुद्र तट, इस बात पर रुचि में मतभेद हो सकता है। किसी को रेतीला विस्तार अच्छा लग सकता है, दूसरों को जलोथर पत्थरों और चट्टानों से भरा तट।

पाली हिल पर एक बंगले में दो कमरे मिल गये। अगले दिन ही सूर्योदय से पूर्व समुद्र तट पर, 'गोल्फ' खेलने की ढलवानों के नीचे समुद्र तट की सड़क पर भ्रमण का क्रम आरम्भ कर दिया। अलेजा जी को पहले दिन ही हाथ में छड़ी लिये अपने आगे सड़क पर चलते देखा था। सूर्योदय से पूर्व वायु समुद्र की लहरों के स्पर्श से सिर पर बहुत सुहावनी लग रही थी परन्तु अलेजा जी कुल्ले पर पगड़ी कसे हुये थे। मूंछें बरफ सी सफेद थीं। इस उम्र में भी पगड़ी पर कबूतर की पूंछ जैसा तुर्रा उठा हुआ था। पगड़ी और तुर्रे को देखकर अनुमान हो गया, पश्चिमोत्तर प्रदेश के निवासी होंगे। कानों में सोने की मुर्कियों (बालियों) से उनका हिन्दू होना भी स्पष्ट था। ख्याल आया, संस्कारों की पकड़ भी कितनी जबरदस्त होती है। श्रीमान् इस हवा में धूप न होने पर भी सिर पर और उस पर पगड़ी जकड़े हुये ही अधिक सुख अनुभव कर रहे हैं।

मुझे जरा तेज चलने का अभ्यास है इसलिये अलेजा जी से आगे निकल गया था। अपने यहां योरुप के भले ईसाइयों सा कायदा तो है नहीं कि प्रातः सड़क पर परिचित-अपरिचित जो भी मिल जाये, उससे मुस्कराकर शुभ दिन (गुडमार्निंग) की कामना कर दी जाये। हम दोनों के प्रातः भ्रमण का समय लगभग एक ही था। दो-तीन बार बिना कुछ बोले या बिना उनकी ओर ध्यान प्रकट किये उनके समीप से आगे निकल गया था। इतने सुबह सड़क पर कभी ही कोई तीसरा व्यक्ति मिलता था। पांचवें-छठे दिन मैं अलेजा जी के पीछे-

पीछे जा रहा था तो एक व्यक्ति सामने से आता दिखाई दिया। समीप के 'वारसोवा' गांव का मछुआ रहा होगा।

मछुआ बिलकुल नई खरीदी हुई, काफी कीमती, स्टिफ-कालर की शर्ट पहने था। उसके शरीर पर एक ही वस्त्र था, केवल कमीज और सिर पर रेशमी रूमाल बंधा था। कमीज के नीचे उसकी बलिष्ठ, तांबे की मूर्ति जैसी जांघों पर भी कुछ नहीं था। वारसोवा के समीप समुद्र तट पर प्रायः ही दिगम्बर मछुये दिखाई दे जाते हैं। उनकी कमर पर पतली डोरी बंधी रहती है। सामने डोरी से कोपीन की तरह कोई कपड़े का टुकड़ा या रूमाल लटका रहता है परन्तु केवल सामने ही, पीछे कोई परदा या कपड़ा नहीं रहता। बढ़िया नई कमीज पहिने और सिर पर रेशमी रूमाल बांधे मछुआ जिस समय हम लोगों के समीप से गुजरा, विरुद्ध दिशा में जाते, हम तीनों पल भर के लिये एक पंक्ति में हो गये।

मछुआ अलेजा जी और मेरे बीच से निकला तो हमारे कदम ठिठके बिना न रह सके। हमारी आंखें मछुये की पीठ की ओर घूम गईं। अलेजा जी की आंखें मछुये की पीठ से फिसल कर मेरी आंखों से मिल गयीं, उनके मुंह से निकल गया—"हाउ फनी !"

मैंने शिष्टाचार की मुस्कान से स्वीकार किया—"किसी मेल-मिलाप या उत्सव के लिये सज-धज के जा रहा है। अभ्यास और संस्कार कितने विचित्र होते हैं परन्तु अपने अभ्यास और संस्कार किसी को विचित्र नहीं लगते। हमारे यहां मन्दिर में सम्मान के लिये जूते उतार कर जाने का कायदा है, यूरोप में सम्मान के लिये मंदिर में अथवा सम्मानित पुरुषों के सामने टोपी उतारी जाती है।"

मछुये की विचित्र पोशाक के प्रसंग से अलेजा जी से बात आरम्भ हो गई तो उनके साथ-साथ ही चलने लगा। अलेजा जी का जन्म-स्थान पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त में ही था। उनका बड़ा पुत्र व्यवसाय के सिलसिले में बम्बई में रहता था। अलेजा जी कई वर्ष पूर्व पश्चिमोत्तर प्रदेश में हेडमास्टर के पद से अवकाश प्राप्त कर चुके थे। देश का विभाजन हो जाने पर जन्मभूमि में रहना असम्भव हो गया था। वे पुत्र के पास बम्बई आ गये थे।

हम लोगों में बातचीत विचित्र संस्कारों और मान्यताओं के प्रसंग पर चली थी। हम दोनों ही पंजाबी थे, हमें पंजाब के बाहर बहुत कुछ विचित्र

दिखाई देता था। मैं उसी प्रसंग में कहता जा रहा था कि दृष्टिकोण बदल जाता है तो रुचि और संस्कार भी बदल जाते हैं। किसी जमाने में पंजाब की स्त्रियां राजस्थानी स्त्रियों की पोशाक की चर्चा करते समय लाज से मुंह पर हाथ रख लेती थीं—हाय, ऊंची चोली और लंहगा पहनती हैं, कुर्ता-कमीज कुछ नहीं, पेट दीखता रहता है; परन्तु अब पंजाब की सब से सम्भ्रान्त स्त्रियां साड़ी के साथ ऊंची चोली पहनने में सम्मान अनुभव करती हैं।

अलेजा जी ने कहा—"संस्कारों का एक उदाहरण मैं आपको बताता हूं। तब मैं 'होती मर्दान' के गवर्नमेंट हाई स्कूल में हेडमास्टर था। लड़कों को स्कूल में दाखिल करवाने के लिये अनुरोध और सिफारिश की बातें तो आपने सुनी होंगी परन्तु अपने लड़के को स्कूल से निकलवाने के लिये अनुरोध और सिफारिश की बात शायद आपने नहीं सुनी होगी।

"वहां स्कूलों में गांव-देहात के लड़के भी पढ़ते थे, स्कूल के साथ बोर्डिंग भी था। आप जानते हैं, सीमा पार के गैर इलाके और अफगानिस्तान में स्कूल नहीं हैं इसलिये कभी-कभी 'वज़ीरी' 'अफरीदी' और 'मोहम्मद' कबीलों के इलाके से बड़े खानदानों के लड़के भी पढ़ने के लिये स्कूलों में आ जाते थे और बोर्डिग में रहते थे। इन लड़कों को अनुशासन में रखना आसान नहीं था। उम्र उनकी काफी होती थी, बीस-बाईस तक की कभी इससे ज्यादा और मनमानी करने की आदतें क्योंकि वह अमीरों, खानों और बड़े मुल्लाओं के बेटे होते थे। जिस साल मैं रिटायर हुआ, उस साल सीमा पार 'बरजई' के इलाके का एक हिन्दू लड़का किशन खान मैट्रिक में पढ़ रहा था···।"

"कृष्ण और खान ?" मैंने विस्मय प्रकट किया।

"हां ! हां !" अलेजा जी ने विश्वास दिलाया। "उस इलाके में मुसलमान खानों का ही प्रभुत्व है इसलिये उस प्रदेश के हिन्दू भी अपने नाम के साथ खान की उपाधि लगा लेते हैं—किशनखान, विष्णुखान, वंशीखान वगैरह-वगैरह।

"किशनखान गंभीर, मेहनती और तीव्र-बुद्धि था। उससे मुझे आशंका रहती थी कि वह स्कूल में कोई उपद्रव न खड़ा कर दे। उपद्रव से मतलब आचार सम्बन्धी बात नहीं, राजनीतिक उपद्रव से है। लड़के पर फ्रंटियर के गांधी अब्दुल गफ्फार खां के लाल-कुर्ती आन्दोलन का असर था। एक बार उसने कुछ लड़कों को लाल-कुर्ती वालों के जुलूस में शामिल होने के लिये भड़का लिया। मुझे मालूम हो गया तो मैंने उन्हें रोक लिया, नहीं तो मेरी नौकरी पर बन आती

और पेंशन से भी हाथ धो बैठता। सीमा प्रान्त में अंग्रेज अफसर राजनीतिक चेतना से बहुत घबराते थे।

"एक दिन किशनखान का मामा और उसके साथ वरज़ई के खान का एक आदमी अच्छी-खासी भट ले कर मेरे मकान पर आये। भेंट में तरह-तरह के सूखे मेवे—बादाम, पिस्ता, अखरोट, खुमानी, चिलगोजे और टोपी के लिये अस्तरखानी मेमने की खाल थी। किशनखान के मामा ने बहुत विनय से अनुरोध किया कि किशनखान का नाम स्कूल से खारिज कर दूं और उसे स्कूल के बोर्डिग में रहने की इजाजत न दूं। किशनखान को पढ़ने और इम्तहान पास करने की कोई जरूरत नहीं। उसे लौट कर अपने बाप का ओहदा और घर-बार संभालना चाहिये। उसके यहां किसी चीज़ की कमी नहीं है। उसका बाप बरजई के खान का मालगुजार था। बरजई के खान के दूत ने भी किशनखान के मामा के समर्थन में खान की ओर से मुझे पैग़ाम दिया कि मैं मेहरबानी करके उनके मालगुजार मोहनदास के बेटे किशनखान को अपने स्कूल में खारिज़ कर दूं।

"बरज़ई के खान की हैसियत बहुत मामूली थी पर था फिर भी खान ही। सीमा पार के किसी भी समर्थ व्यक्ति को नाराज करने में थोड़ा बहुत जोखिम थी ही। अगर वह अपमान या वैर मान लेता तो बदला लेने के लिये पचास-साठ मील से भी आ सकता था। उन का जिन्दा रहना और मरना सब बदला लेने के लिये ही होता है। बदला लेने का सिलसिला पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलता रहता है।

"किशनखान मन लगाकर पढ़ रहा था। उसका कोई अपराध भी नहीं था। मैं उसे स्कूल से कैसे खारिज कर देता? अन्याय करने के इस अनुरोध से मैं विचित्र संकट में फंस गया। किशनखान के मामा को समझाया—लड़का इम्तहान देना चाहता है, बहुत मेहनत से पढ़ रहा है। छ-सात महीने की बात है, उसका दिल तोड़ना ठीक नहीं है। वह फर्स्ट-डिवीजन में आ सकता है। स्कूल में भी फर्स्ट रह सकता है। वह इम्तहान दे ले तो क्या हर्ज है? इल्म ऐसी चीज है कि गरीब-अमीर सभी के लिये फायदेमंद हो सकता है। लड़का पढ़-लिख कर खान के लिये भी अधिक सहायक और उपयोगी हो सकेगा।

"किशनखान के मामा ने मुझे परिस्थिति बतायी। किशनखान को अपना काम करने के लिये और खान का काम करने के लिये भी अंग्रेजी-फारसी तालीम

की जरूरत नहीं थी । उसे जो कुछ करना था, वह वहां जा कर ही सीख सकता था । किशनखान के पिता की मृत्यु छः मास पूर्व हो चुकी थी । खान मालगुजार का ओहदा मोहनदास के बेटे को ही देना चाहता था । खान के खानदान को इस खानदान पर भरोसा था । मोहनदास कहने को तो केवल मालगुजार ही था लेकिन उसका रुतबा वजीर का था । इलाके की सब उगाही, इंतजाम और इंसाफ उसी के हाथ में था । एक तरह से अपनी ही अमलदारी समझिये । ऐसे खानदानी काम को छोड़कर किशनखान इम्तहान पास करके क्या बना लेगा ? उसका बाप तो किसी स्कूल में नहीं पढ़ा था, न अंग्रेजी जानता था न फारसी । खत्रियों का बही लिखने का इल्म टांकरी (मुड़िया) ही जानता था और हुकूमत करता था । किशनखान को ही इम्तहान पास करके क्या करना है ? खान छः महीने से लड़के की राह देख रहा है । यह नहीं पहुंचेगा तो उसे मजबूरी में कोई मालगुजार रखना ही होगा । मोहनदास से पहले समद का खानदान बरजई की वजारत करता था । समद हर रोज खान की खुशामद कर रहा है, आखिर खान उसी को मालगुजार बना देगा ।

मैंने किशनखान के मामा और खान का पैगाम लाने वाले आदमी को आश्वासन दिया—"मैं लड़के को समझाऊंगा । लड़का खुद भी समझदार है, बच्चा नहीं है । अपना भला-बुरा समझता है । आप यकीन रखिये !"

"किशनखान के मामा और खान के दूत सराय में ठहरे हुये थे और लड़के को लेकर ही बरजई लौटना चाहते थे ।

"किशनखान अच्छा स्टूडेंट था । मैं नहीं चाहता था कि वह इम्तहान दिये बिना चला जाये लेकिन सोचा—वह लोग अपना भला-बुरा खुद सोच सकते हैं । उसके खानदान के हाथ से खान की वज़ारत निकल जाना भी मुनासिब नहीं था । स्कूल में किशनखान को अपने कमरे में बुला कर उसके मामा के अनुरोध और खान के पैगाम के बारे में बताया । उससे सहानुभूति प्रकट की—तुम लायक और नेकबख्त लड़के हो । हम तो यही चाहते थे कि तुम इम्तहान देते और अच्छी हैसियत से पास होते । उसी में स्कूल की नेकनामी और हमारी खुशी होती लेकिन तुम्हारे घर के हालात, खानदानी मामलों और तुम्हारे वालिद के मालिक की मर्जी में हमारा हायल होना वाजिब नहीं । तुम खुद समझदार हो, अब बच्चे भी नहीं हो । इस जमाने में सिर्फ मैट्रिक पास कर लेने की कोई खास कीमत नहीं रही । अपने घर की बेहतरी और खान की

मर्जी का खयाल करके तुम्हारा घर लौट जाना ही अच्छा है ।

"किशनखान का चेहरा बहुत गंभीर हो गया और उसने दृढ़ता से कहा—"सर, घर के हालात और खान की मर्जी मैं जानता हूं । सर, वह मुझे बहुत परेशान कर रहे हैं ।" लड़के की आंखें सुर्ख हो गयीं, "मैं खान की नौकरी नहीं करना चाहता । मैं इम्तहान पास करके कोई दूसरा रोजगार करना चाहता हूं । आप मुझे बिना कसूर के स्कूल से निकाल देंगे तो बेइंसाफी होगी ।"

"किशनखान का उत्तर सुन कर मुझे विस्मय हुआ । लड़के को अच्छी आमदनी और रुतबे की परवाह नहीं थी । मैंने उसे सहानुभूति से पास बुला कर उसकी पीठ पर हाथ रख कर समझाया—"बेटा, हम तुम्हें स्कूल से निकाल नहीं रहे हैं । तुम्हारे मामा से जो कुछ सुना था, उसी के कारण और तुम्हारे खानदान की बेहतरी का ख्याल करके बात कर रहे हैं । तुम्हें अपने वालिद साहब की जगह खान की वज़ारत पसन्द नहीं ? तुम्हारे मामा तो कहते हैं कि खान के इलाके में तुम्हारे वालिद का बहुत बड़ा रुतबा था, उनकी वज़ीर की हैसियत थी और बहुत अच्छी आमदनी थी ।

"किशनखान का चेहरा तमतमा गया—"सर, मुझे जलालत की वह नौकरी कतई गवारा नहीं है । मैं पेशावर, पिण्डी या पंजाब में मामूली मुंशी या क्लर्क की नौकरी करना पसन्द करूंगा या मोटर का ड्राइवर बन जाऊंगा । वह भी नहीं होगा तो सड़क कूटने की मज़दूरी कर लूंगा लेकिन मुझे खान की नौकरी की जलालत पसन्द नहीं है ।"

"मैं बहुत दुविधा में था । लड़का बहुत उत्तेजित हो गया था । उसकी उत्तेजना का रहस्य मुझे कुरेद रहा था कि वह खान की वज़ारत में क्या जलालत समझता था । मेरे बहुत आत्मीयता से समझाने और यह विश्वास दिलाने पर कि उसका खान की नौकरी न चाहने का रहस्य किसी पर प्रकट नहीं किया जायेगा, किशनखान ने बहुत संकोच से कहानी सुनायी । आप देखियेगा कि संस्कारों के कारण मान-अपमान की धारणायें और लोगों के व्यवहार कितने विचित्र हो सकते हैं :—

"किशनखान के जन्म से पहले उसके दादा जलालाबाद में बजाजे और किराने की मामूली सी दूकान करते थे और किशनखान का पिता मोहनदास ब्रिटिश सीमा पार के इलाकों में बजाजी की गठरी पीठ पर लादे गांव-गांव कपड़ा बेचता फिरता था । मोहनदास कभी-कभी बरज़ई के खान नादिरखां के

यहां भी बजाजी वेचने पहुंच जाता था। नादिरखां की उम्र काफी हो गयी थी लेकिन उसे बुढ़ापे में भी घूमने-फिरने का शौक था। अपने इलाके में बिना खिदमतगारों और अहलकारों को साथ लिये दूर-दूर तक सैर के लिये निकल जाता था। ऐसे ही एक मौके पर मोहनदास पीठ पर बजाजे की गठरी लिये नादिरखां को समीप के गांव की पगडंडी पर मिल गया। मोहनदास गांव में बजाजी वेचने जा रहा था। खान मोहनदास से बातचीत, हंसी-मजाक करता हुआ चला जा रहा था। अवसर की बात, खान की हवा काफी आवाज से खारिज हो गई।

"पठानों के समाज में किसी के सामने आवाज के साथ हवा खारिज हो जाने के बराबर जलालत और शरम की बात दूसरी नहीं समझी जाती। इस लिये पठान बैठते समय सावधानी के लिये अपनी चादर नीचे रख लेता है। नादिरखां का चेहरा बदनामी और लज्जा की आशंका से एकदम पीला पड़ गया।

"मोहनदास ने खान की खिन्नता भांप ली और उसे तसल्ली देने के लिये कह दिया—"मालिक, कोई बात नहीं। यहां कोई नहीं। पत्थरों और पेड़ों के कान नहीं होते, जबान नहीं होती। किसी ने नहीं सुना।"

"नादिरखां पल भर ठिठका। उसे ख्याल आ गया, अगर यह कराड़ (खत्री-बनिया) इधर-उधर कहकर मेरी बदनामी फैला दे···? खान का हाथ उसके कमरबंद में लगी कटार की ओर बढ़ गया।

"मोहनदास की आंखें खान की ओर थीं। खान का हाथ लबादे में कमरबंद की ओर जाते देख वह अपनी बजाजे की गठरी फेंक नीचे खेतों में कूद गया।

खान बौखला उठा। उस स्थिति में वह मोहनदास को कैसे जिंदा छोड़ देता! वह उसके पीछे लपका परन्तु मोहनदास कई कदम आगे था। खड्ड में ढलवान पर पांच-सात घरों की बस्ती थी। मोहनदास पहले ही मकान के सामने खड़े पठान को देख कर आर्त स्वर में पुकार उठा—"पनाह! पनाह!"

"मोहनदास का पीछा करता नादिरखां एक वेरी की ओट में था। पठान ने पनाह की पुकार सुन कर मोहन को अपने दरवाजे के भीतर कर लिया और कोठरी के भीतर से बन्दूक लेकर दरवाजे पर खड़ा हो गया। मोहनदास की आर्त पुकार सुनकर पड़ोस से एक पठान, दो-तीन स्त्रियां और बच्चे भी बाहर निकल आये।

"मोहनदास को शरण देने वाले पठानों ने देखा—पनाह मांगने वाले कराड़

के पीछे इलाके का खान हाथ में कटार लिये दौड़ता, हांफता चला आ रहा था। खान की आंखें क्रोध से लाल थीं।

"पठान कराड़ का पीछा करते नादिरखां की मुद्रा देख कर घबराये परन्तु वे शरण दे चुके थे। उन्होंने खान को झुक कर सलाम किया।

"क्रुद्ध खान ने पठानों को ललकारा—"कहां है वह बदजात मरदूद ?" कराड़ खान का अपमान-जनक रहस्य प्रकट कर सके, इससे पहले ही नादिरखां कराड़ को खत्म कर देना चाहता था।

"पठान मोहनदास को शरण दे चुके थे। वे गरीब रियाया थे परन्तु उन्हें पठानों की 'शरणागत की रक्षा की आन' का ख्याल था।

"पठानों ने खान के सम्मुख बहुत विनय से प्रार्थना की—"मालिक, क्या खता हो गयी कराड़ से ?"

"खान फिर गुर्रा उठा—"एकदम निकालो मरदूद को नहीं तो पूरी बस्ती फुंकवा दूंगा !"

"शरण देने वाले पठान का हृदय कांप रहा था, वह धर्म-संकट में था। उसने एक बार फिर बात करने का साहस किया—"मालिक···।"

"पठान के कुछ कह सकने के पहले ही मोहनदास दरवाजे में आकर हाथ जोड़े गिड़गिड़ा उठा—"मालिक, जान बक्शी जाय ! खता माफ हो, पनाह दीजिये !"

"कोलाहल से बस्ती के दो और जवान निकल आये थे। स्त्रियां और बच्चे खान के अदब और भय से किवाड़ों की ओट में हो गये थे। मर्द आतंक और कौतूहल से स्तब्ध थे। खान की आंखों में खून भरा हुआ था। दांतों से होंठ चबाकर उसने मोहनदास की ओर कदम बढ़ाया। बन्दूक लिये पठान खान का रास्ता रोकने के लिये बढ़ा ही था कि मोहनदास जिबह होते हुये बकरे की तरह फिर रिरियाया—"मालिक, कुसूर की माफी हो ! हजूर के सामने बेअदबी की खता हो गयी। टर को (पाद को) रोकने की बहुत कोशिश की, कमजोर आदमी हूं, निकल गया। मालिक जो चाहें, सजा दें ! जान बख्शी जाय !"

खान और मोहनदास के बीच खड़े हुये शरण देने वाले पठानों ने खान के क्रोध का कारण समझा। उनके चेहरों पर तनाव मिट गया और मुस्कराहट आ गयी। उन्होंने झुक कर खान के घुटने छूकर विनय की—"हजूर, कराड़ पनाहगुजीं (शरणार्थी) है। बेअदबी की खता के लिये माफी मांग रहा है।

उसकी जान बख्शी जाये।"

"एक बूढ़े पठान ने दया के लिये गिड़गिड़ाते मोहनदास के प्रति करुणा और घृणा से मालिक के सामने सिफारिश की—"गरीबपरवर, अनाज से अनाज (दाल-रोटी) खानेवाले नाचीज कराड़ में दम ही कितना है ? उससे खता नहीं होगी तो किससे होगी ? हकीर की जान वख्शी जाये।"

"नादिरखां के शरीर का तनाव मिट गया। वह कुछ देर ख्याल में खोया चुपचाप खड़ा रहा। मोहनदास ने चातुर्य से खान के सम्मान की रक्षा कर दी थी और उसकी जलालत अपने सिर ले ली थी।

"नादिरखां ने कटार कमरबन्द में खोंस ली। मोहनदास की जान बख्श दी परन्तु सावधानी के लिये उसे अपने साथ गढ़ी में ले गया।

"नादिरखां अपनी गढ़ी में लौटकर भी दुविधा में था। मोहनदास ने खान को अपमान से बचाने के लिये जो चतुरता की थी और उसकी जलालत अपने सिर ले ली थी, उस अहसान से खान का मन दबा जा रहा था। उसके मन में बार-बार आशंका सिर उठाती थी···अगर कराड़ कभी दगा दे गया, उसने कभी बक दिया तो·····! उस दिन और रात भर मोहनदास नादिरखां की कैद में रहा। दूसरे दिन नादिरखां ने मोहनदास को अपना मालगुजार नियुक्त कर दिया।

"नादिरखां बूढ़ा था। पांच-छः बरस बाद उसकी मृत्यु हो गयी। मृत्यु से पहले नादिरखां ने अपने बेटे सुबुकखां को ताकीद कर दी थी कि मोहनदास उनका अज़ीज़ दोस्त था और उस पर मोहनदास के कभी न चुक सकने वाले एहसान थे। मोहनदास अपनी ज़िन्दगी तक बरजई का मालगुजार रहेगा और उसके बाद बरजई की मालगुजारी उसका खान्दान वसूल करता रहेगा।"

"किशनखान ने बताया—यह ठीक था कि बरजई में उसके पिता की ही अमलदारी और सिक्का चलता था। वह जो चाहता था, स्याह-सफेद कर सकता था। खान उसके इन्तज़ाम में दखल नहीं देता था। लोग सम्मान से उसके पिता को बरजई का वज़ीर कहते थे लेकिन पीठ पीछे उसे टरटरे (पादने वाले) वज़ीर का बेटा कहकर भी उल्लेख करते थे। किशनखान ऐसी जलालत बर्दाश्त करने के लिये तैयार नहीं था।

"किशनखान ने आवेश में मुझे खान की वज़ारत की ज़लालत समझने का रहस्य बता दिया था। आवेश में रहस्य प्रकट हो जाने से उसने इतनी लज्जा

अनुभव की कि दूसरे दिन जब उसका मामा और खान का पैग़ाम लाने वाला दूत किशनखान को लिवा ले जाने के लिये बोर्डिंग में आये तो पता चला, किशनखान पिछली रात बोर्डिंग की दीवार फांद कर भाग गया था।

●

होली का मज़ाक

"बीबी जी, आप आवेंगी कि हम चाय बना दें !" किलसिया ने ऊपर की मंजिल की रसोई से पुकारा ।

"नहीं, तू पानी तैयार कर—तीनों सेट मेज़ पर लगा दे, मैं आ रही हूं । बाज आये तेरी बनायी चाय से । सुबह तीन-तीन बार पानी डाला तो भी इतनी काली और ज़हर की तरह कड़वी···। तुम्हारे हाथ डिब्बा लग जाय तो पत्ती तीन दिन नहीं चलती । सात रुपये में डिब्बा आ रहा है । मरी चाय को भी आग लग गयी है ।" मालकिन ने किलसिया को उत्तर दिया । आलस्य अभी टूटा नहीं था । ज़रा और लेट लेने के लिये बोलती गयीं, "बेटा मंटू, तू जरा चली जा ऊपर । तीनों पाट बनवा दे । बेटा, जरा देखकर पत्ती डालना, मैं अभी आ रही हूं ।"

"अम्मा जी, जरा तुम आ जाओ ! हमारी समझ में नहीं आता । बर्त्तन सब लगा दिये हैं ।" सत्रह वर्ष की मंटू ने ऊपर से उत्तर दिया ।

ठीक ही कह रही है यह लड़की, मालकिन ने सोचा । घर मेहमानों से भरा था, जैसे शादी-ब्याह के समय का जमाव हो । चीफ़ इंजीनियर खोसला साहब के रिटायर होने में चार महीने ही शेष थे । तीन वर्ष की एक्सटेंशन भी समाप्त हो रही थी । पिछले वर्ष बड़े लड़के और लड़की दोनों के ब्याह कर दिये थे । रिटायर होकर तो पेन्शन पर ही निर्वाह करना था । जो काम अब हज़ार में हो जाता, रिटायर होने पर उस पर तीन हज़ार लगते । रिटायर होकर इतनी बड़ी, तेरह कमरे की हवेली भी नहीं रख सकते थे ।

पहली होली पर लड़की जमाई के साथ आई थी । बड़ा लड़का आनन्द सात दिन की छुट्टी लेकर आया था इसलिये बहू को भी बुला लिया था । आनन्द की छोटी साली भी बहन के साथ लखनऊ की सैर के लिये आ गयी

थी। इंजीनियर साहब के छोटे भाई गोंडा जिले में किसी शुगर मिल में इंजीनियर थे। मई में उनकी लड़की का ब्याह था। वे पत्नी, साली और लड़की के साथ दहेज खरीदने के लिये लखनऊ आये हुये थे। खूब जमाव था।

मालकिन ऊपर पहुंचीं। प्लेटों में अन्दाज़ से नमकीन और मिठाई रखी। जमाई ज्ञान बाबू के लिये बिस्कुट और सन्तरे रखे। साहब इस समय कुछ नहीं खाते थे। उनके लिये थोड़ी किशमिश रखी। किलसिया और सित्तो के हाथ नीचे भेजने के लिये ट्रे में चाय लगाने लगीं।

"अम्मा जी, यह क्या ?" मंटू मां के बायें हाथ की ओर संकेत कर झल्ला उठी, "फिर वही डंडे जैसी खाली कलाइयां ! कड़ा फिर उतार दिया ! तुम्हें तो सोना घिस जाने की चिन्ता खाये जाती है।"

"नहीं मंटू....." मां ने समझाना चाहा।

"तुम जरा खयाल नहीं करतीं," मंटू बोलती गयी, "इतने लोग घर में आये हुये हैं। त्योहार का दिन है। यही तो समय होता है कुछ पहनने का और तुम उतार कर रख देती हो.....।"

मंटू झुंझला ही रही थी कि उसकी चाची, मालकिन की देवरानी लीला नाश्ते में सहायता देने के लिये ऊपर आ गई। उसने भी मंटू का साथ दिया—"हां भाभी जी, त्योहार का दिन है, घर में बहू आयी है, जमाई आया है, ऐसे समय भी कुछ नहीं पहना ! कलाई नंगी रहे तो असगुन लगता है। सुबह तो चूड़ियां भी थीं, कड़ा भी था।"

मालकिन ने नाश्ता बांटने से हाथ रोककर मंटू से कहा—"जा नन्हीं, दौड़ कर जा, बीच वाले गुसलखाने में देख ! सिर धोने लगी थी तो बालों में उलझ रहा था, वहीं उतार कर रख दिया था। जहां मंजन-वंजन पड़ा रहता है, वहीं रखा था। लाकर पहना दे !"

मंटू जीने से धड़धड़ाती हुई नीचे गयी। गुसलखाने में देखकर उसने वहीं से पुकारा—"अम्मा जी, यहां कुछ नहीं है।"

मालकिन ने मंटू की बात सुनी तो चेहरे पर चिन्ता झलक आयी। देवरानी से बोलीं—"लीला, मेरे बाद तुम नहायी थीं न। तुमने नहीं देखा ! आल्मारी में रख दिया था" और फिर वहीं बैठे-बैठे मंटू को उतर दिया, "अच्छा बेटी, जरा अपने कमरे में तो देख ले ! ड्रेसिंग टेबुल की दराज़ में देख लेना, कपड़े वहीं पहने थे !"

लीला की बहिन कैलाश भी ऊपर आ गयी थी। उसने भी पूछ लिया—"क्या है, क्या नहीं मिल रहा ?"

लीला को भाभी की बात अच्छी नहीं लगी। चेहरा गंभीर हो गया। उसने तुरन्त अपनी बहिन को संबोधन किया—"काशो, हम दोनों तो नीचे के गुसलखाने में नहाने गयी थीं···।"

मालकिन ने देवरानी के बुरा मान जाने की आशंका में तुरन्त बात बदली—"मैं तो कह रही हूं कि तू वहां नहाई होती तो उठाकर संभाल लिया होता।"

भाभी की बात से लीला को संतोष नहीं हुआ। उसने फिर कैलाश को याद दिलाया—"काशो, मैं बीच के गुसलखाने में जा रही थी तो किलसिया ने नहीं कहा था कि बहू का साबुन-तौलिया और उसके लिये गरम पानी रख दिया है। आपके बाद तो कुसुम ही नहाई थी। संभाल कर रखा होगा तो उसी के पास होगा।"

बीच की मंजिल से फिर मंटू की पुकार सुनाई दी—"अम्मा जी, यहां भी नहीं है, मैंने सब देख लिया है।"

मालकिन ने कैलाश से कहा—"काशो बहन, तू जा नीचे, मंटू से कह कि जरा कुसुम से पूछ ले। उसने संभाल लिया होगा। मुझे तो यही याद है कि गुसलखाने की आलमारी में रखा था।"

कैलाश नीचे जा रही थी तो लीला ने मालकिन को सुझाया—"भाभी जी, आपके बाद···।"

किलसिया कमरे में आ गई थी। बोली—"गोल कमरे में चाय दे दी है। बड़े साहब, जमाई बाबू और बड़े भैया तीनों वहीं पी रहे हैं। पकौड़ी लौटा दी है, कोई नहीं खायेगा। बहू जी, उनकी बहिन और बड़ी बिटिया भी चाय नीचे मंगा रही हैं।"

"सित्तो क्या कर रही है ?" मालकिन ने किलसिया से पूछा।

"नीचे के गुसलखाने में कपड़े धो रही है।"

किलसिया बहू, उनकी बहिन और बड़ी बिटिया के लिये चाय लेकर चली तो बोली—"मंटू बीबी के लिये भी प्याली रख दो, नहीं तो हमें फिर दौड़ायेंगी। वह उन्हीं के साथ पियेंगी जरूर।"

किलसिया ट्रे लेकर चली गयी तो लीला फिर बोली—"आपके बाद कुसुम से पहले किलसिया भी तो गुसलखाने में गयी थी। उसी ने तो आपके कपड़े

उठा कर कुसुम के लिये साबुन-तौलिया रखा था।" लीला ने स्वर दबा कर कहा।

"भाभी जी, मैंने आपसे कहा नहीं पर किलसिया की आदत अच्छी नहीं है। पहले भी देखा था, इस बार भी दो बार पैसे उठ चुके हैं। परसों मैंने मेज की दराज में एक रुपया तेरह आना रख दिये थे, चार आने चले गये। 'इनके' कोट की जेब में रुपये-रुपये के सत्ताइस नोट थे, एक रुपया उड़ गया। कमरे किलसिया ही साफ करती है। मैंने सोचा, इतनी सी बात के लिये मैं क्या कहूं ?"

मालकिन ने समझाया—"तू भी क्या कहती है लीला ! आठ आने, रुपये की बात मैं मानती हूं, मरी उठा लेती होगी पर पांच तोले का कड़ा उठा ले, ऐसी हिम्मत कहां ? मरी बेचने जायगी तो पकड़ी नहीं जायगी ?"

मंटू और कैलाश ने आकर बताया—"कुसुम भाभी कहती हैं कि उन्होंने तो कड़ा देखा नहीं।"

सित्तो ने कपड़े धोकर सामने की छत पर लगे तारों पर फैला दिये थे। उसने वहीं से मालकिन को पुकारा—"बीबी जी, सब काम हो गया, अब हम जायं !"

किलसिया फिर ऊपर आ गयी थी। वह भी बोली—"हमें भी छुट्टी दीजिये, त्योहार का दिन है, जरा घर की भी सुध लें।"

"जाना बाद में" मालकिन बोलीं, "देखो, हमने सिर धोया था तो कड़ा उतार कर गुसलखाने की अलमारी में रख दिया था। पहले ढूंढ़ कर लाओ, तब कोई घर जायगा।"

किलसिया ने तुरन्त विरोध किया—"हम क्या जानें, हमें तो जिसने जो कपड़ा दिया गुसलखाने में रख दिया। रंग से खराब कपड़े उठा कर धोबी वाली पिटारी में डाल दिये। हमने छुआ हो तो हमारे हाथ टूटें।"

सित्तो ने दुहाई दी—"हाय बीबी जी, हम तो बीच के गुसलखाने में गयी ही नहीं। हम तो सुबह से महाराज के साथ बर्तन-भांड़े में लगी रहीं और तब से नीचे कपड़े धो रही थीं।"

"खामख्वाह क्यों बकती हो !" मालकिन ने दोनों को डांट दिया, "मैं किसी को कुछ कह रही हूं ? कड़ा गुसलखाने में रखा था, पांच तोले का है, कोई मज़ाक तो है नहीं ! किस की हिम्मत है जो पचा लेगा !"

घर भर में चिन्ता फैल गयी। सब ओर खुसुर-फुसुर होने लगी। बात मर्दों

में भी पहुंच गयी । जमाई ज्ञान बाबू ने पुकारा—"क्यों मंटा वहन जी, क्या बात है ? मां जी, मंटा ने छिपा लिया है । कहती हैं पांच चाकलेट दोगी तो ढूंढ़ देगी ।"

मंटा ने विरोध किया—"हाय जीजा जी, कितना झूठ ! मैंने कब कहा ? मैं तो खुद सब जगह ढूंढती फिर रही हूं ।"

बड़ा लड़का आनन्द भी बोल उठा—"अम्मा जी, याद भी है कि कड़ा पहना था । कहीं स्टील वाली अल्मारी में ही तो नहीं पड़ा है । तुम घर भर ढुंढवा रही हो । तुम भूल भी तो जाती हो । चाभियां रखती हो ड्रेसिंग टेबिल की दराज में छिपाकर और ढूंढती हो रसोई में ।"

मालकिन ने जीना उतरते हुये वेटे को उत्तर दिया—"तुम भी क्या कह रहे हो ? कल शाम लीला के साथ दाल धो रही थी तो बायें हाथ से घड़ी खोल कर रख दी थी । मंटू ने शोर मचाया, खाली कलाई अच्छी नहीं लगती । वही घड़ी नीचे रखकर कड़ा ले आयी थी ।"

बड़ी लड़की ने मां का समर्थन किया—"क्या कह रहे हो भैया, सुबह भी कड़ा अम्मा जी के हाथ में था । हम ने खुद देखा है ।"

कैलाश ने भी वीणा का समर्थन किया—"सुबह मिश्रानी जी के यहां गयी थीं, तब भी कड़ा हाथ में था । मिश्रानी जी ने नहीं कहा था कि बहुत दिनों वाद पहना है !"

सित्तो ने दोनों गुसलखाने अच्छी तरह देखे । फिर महाराज के साथ रसोई में सब जगह देख रही थी । किलसिया सब कमरों में जा-जाकर ढूंढ रही थी । न देखने लायक जगह में भी देख रही थी और बड़बड़ाती जा रही थी—"बीबी जी चीज-बस्त खुद रख कर भूल जाती हैं और हम पर बिगड़ा करती हैं ।"

वात घर में फैल गयी थी । बड़े साहब और छोटे साहब ने भी सुन लिया था । दोनों ही इस विषय में जिज्ञासा कर चुके थे । छोटे साहब भाभी से अंगरेजी में पूछ रहे थे—"आपके नहाने के बाद नौकरों में से कोई घर के बाहर गया था या नहीं ?" सभी सहमे हुये थे । स्त्रियां, लड़कियां सब आंगन में इकट्ठी हो गयी थीं । दवे-दवे स्वर में नौकरों के चोरी लगने के उदाहरण वता रही थीं । अव मालकिन भी घबरा गयी थीं । देवरानी ने उनके समीप आकर फिर कहा—"देखा नहीं भाभी, किलसिया कसमें तो बहुत खा रही थी पर चेहरा उसका उतर गया है ।"

"यहां आकर तो देखिये !" किलसिया ने बड़े साहब के कमरे से चिक उठाकर पुकारा।

"क्यों, क्या है ?" मंटा और वीणा ने एक साथ पूछ लिया।

"हम कह रहे हैं, यहां तो आइये !" किलसिया ने कुछ झुंझलाहट दिखायी।

वीणा और मंटा उधर चली गयीं।

दोनों बहिनें कमरे से बाहर निकलीं तो मुंह छिपाये दोहरी हुई जा रहीं थीं। हंसी रोकने के लिये दोनों ने मुंह पर आंचल दबा लिये थे।

किलसिया कमरे से निकली तो भवें चढ़ाकर ऊंचे स्वर में बोल उठी—"रात साहब के तकिये के नीचे छोड़ आयीं। घर भर में ढुंढाई करा रही हैं।"

"पापा के तकिये के नीचे।" मंटा ने हंसी से बल खाते हुये कह ही दिया।

लीला, कुसुम, कैलाश, नीता सबके चेहरे लाज से लाल हो गये। सब मुंह छिपा कर फिस-फिस करती इधर से उधर भाग गयीं।

मालकिन का चेहरा खिसियाहट से गंभीर हो गया। अवाक् निश्चल रह गयीं। वीणा से ज्ञान बाबू ने अर्थपूर्ण ढंग से खांस कर कहा—"कड़ा मिलने की तो डबल मिठाई मिलनी चाहिये।"

छोटे बाबू से भी रहा नहीं गया, बोल उठे—"भाभी, क्या है ?"

गोल कमरे से बड़े साहब की भी पुकार सुनाई दी—"मिल गया, मंटू कहां से मिला है ?"

मंटू मुंह में आंचल ठूंसे थी, कैसे उत्तर देती ?

छोटे साहब फिर बोले—"भाभी, भैया क्या पूछ रहे हैं ?"

मालकिन खिसियाहट से बफरी हुई थीं, क्या बोलतीं ?

लीला ने हंसी दबाकर भाभी के कान में कहा—"देखा चालाक को, कहां जाकर रख दिया। तभी ढूंढती फिर रही थी।"

जेवर चोरी की बात पड़ोसी मिश्रा जी के यहां भी पहुंच गयी थी। मिश्राइन जी ने आकर पूछ लिया—"मंटू की मां, क्या बात है, क्या हुआ ?"

"कुछ नहीं, कुछ नहीं।" मालकिन को बोलना पड़ा, "खामख्वाह शोर मचा दिया।"

कुसुम से रहा नहीं गया। अपने कमरे से झांक कर बोली—"ताई जी, किलसिया ने अम्मा जी के साथ होली का मज़ाक किया है।..."

खुदा का खौफ़

मई-जून के महीने में दिल्ली जाना कौन पसन्द करता है ! दो रजिस्टर्ड पत्र लिखने पर भी उत्तर न आया था, इसलिये स्वयं जाना पड़ा । सेक्रेटरी से मिल कर परिस्थिति समझाई । उन्होंने साढ़े चार बजे आकर लाईसेंस ले जाने के लिये कह दिया था ।

मई का अन्तिम सप्ताह । दोपहर ढाई बजे का समय । लू कनाट प्लेस की हैसियत की उपेक्षा करके दुकानों के गोल चक्कर के चौड़े-चौड़े बरामदों में हू-हू कर रही थी । दिल्ली में दूकानें दोपहर एक से तीन बजे तक के लिये बन्द रहती हैं । फुटपाथ पर सौदा वेचने वालों ने भी अपने सौदे को धूल से बचाने के लिये अखबार और चादरें फैला कर ढक दिया था । शापिंग के लिये भी समय का उपयोग नहीं हो सकता था । ऐसी लू में घंटे भर आराम के लिये आनन्द पर्वत तक लौट कर जाना भी व्यर्थ था । समय काटने के लिये 'टी-हाउस' में चला गया । एक प्याला काफी लेकर बैठे रहने के अतिरिक्त दूसरा उपाय न था । काफी के लिये आर्डर दे दिया और पंखे के नीचे खाली जगह की तलाश में इधर-उधर नजर दौड़ाई ।

'टी-हाउस' में कर्नल रल्ली दिखाई दे गये तो अपनी नजर पर विश्वास न हुआ पर वे सशरीर साक्षात थे । एक पंखे के नीचे खाली छोटी मेज पर अकेले डलियानुमा कुर्सी पर लुढ़के हुये थे । उनके व्यक्तित्व का सूचक बड़ा सा सिगार उंगलियों में थमा हुआ था । सोचा—शायद धूप से चौंधियाई आंखों को भ्रम हो रहा है । पुकारा नहीं, चुपचाप उनकी ओर बढ़ गया । आहट पाकर उनकी आंखें मेरी और उठीं और उन्होंने पुकार लिया—"हलो, कब आये ?"

'यह तो मुझे पूछना चाहिये !" कुर्सी खींचते हुये मैंने विस्मय प्रकट किया, "आप यहां कैसे ? क्या छुट्टी लेकर आये हैं, ऐसा क्या जरूरी काम पड़ गया ?

अफगानिस्तान कैसा लगा ?"

"बिल्कुल छूट कर, नौकरी छोड़ कर आ गया हूं।" यह कह कर रल्ली साहब ने मेरे दिल्ली आने का कारण पूछा।

अपनी उत्सुकता दबा कर दिल्ली आने का कारण बताया और विस्मय प्रकट किया—"पांच हजार रुपये माहवार की नौकरी छोड़ आये। क्या जलवायु माफिक नहीं बैठा ? आखिर क्या हुआ ?"

"खुदा का खौफ़।" कर्नल रल्ली ने मुस्कराकर कह दिया।

"खुदा का खौफ़ ! क्या मतलब ?"

× × ×

कर्नल रल्ली ने सात मास पूर्व एम० ई० एस० (मिलिटरी इंजीनियरिंग सर्विस) से अवकाश प्राप्त किया था। उनके इंजीनियरिंग के ज्ञान और कौशल की बहुत ख्याति है। काश्मीर में दुरूह पहाड़ों पर सुरंगें काट-काट कर बहुत कम समय में इतनी अच्छी सड़कें बना सकने का श्रेय उन्हीं को है। इंजीनियरिंग के कौशल के साथ उनकी दूसरी ख्याति भी है, ऊपर की आमदनी स्वीकार न करने की। नौकरी के समय में, नौकरी के बाद निर्वाह के साधन जुटा लेने की समझदारी उन्होंने नहीं दिखायी थी, इसलिये प्रायः चिंतित दिखायी देते थे कि केवल पेंशन से कैसे निर्वाह हो पायेगा ? लड़का इंजीनियरिंग कालेज में और लड़की मेडिकल कालेज में हैं। पेंशन तो उन्हीं की पढ़ायी में खप जायेगी।

सौभाग्य या दुर्भाग्य से, मिलिटरी से अवकाश प्राप्त करते ही उन्हें यू० एन० ओ० की ओर से पांच हजार मासिक पर आफर मिल गया। अफगानिस्तान में तीन वर्ष तक सड़कों के निर्माण के लिये मुख्य परामर्शदाता का काम था। आफर को उन्होंने सहर्ष स्वीकार कर लिया था।

कर्नल रल्ली का कैम्प जलालाबाद में था। उनके मातहत इंजीनियर और ओवरसियर उस पहाड़ी प्रदेश का सर्वे कर रहे थे। कर्नल के जलालाबाद पहुंचने से पहले ही प्रदेश में खबर फैल चुकी थी कि खैबर से जलालाबाद तक पक्की सड़क बनवाई जायेगी। खैबर और जलालाबाद के बीच के इलाके का सम्पर्क राजधानी काबुल से हो जायेगा। सड़क किन इलाकों से होकर निकलेगी,

दूर-दूर तक चर्चा का यही विषय था। इस विषय में अनेक अनुमान लगाये जा रहे थे। जहां भी चार आदमी जुट जाते, यही चर्चा होने लगती। सड़क और पुल बनाने वाले अनेक ठेकेदार, कर्नल और उनके मातहतों को सलामियां देने आते रहते थे। ठेकेदारों के लिये कर्नल का एक ही जवाब था—आप टेंडर मांगे जाने की प्रतीक्षा कीजिये।

ठेकेदारों के अतिरिक्त खैबर और जलालाबाद के बीच के इलाकों और जिर्गों से अच्छी हैसियत के लोग और छोटे-मोटे खान उनसे मुलाकात करने के लिये आने लगे। ऐसे जो भी लोग मुलाकात के लिये आते किस्म-किस्म के मेवे, कस्तूरी के नाफ़े, शिलाजीत, कढ़े हुये रूमाल और छोटे-मोटे कालीनों की भेंट लेकर-आते। आने वाले लोग कर्नल को बता देना चाहते थे कि सड़क के लिये सबसे उपयुक्त रास्ता उनके प्रदेश से ही था। वे दूसरे सम्भावित रास्तों में खिसकने वाले कच्चे पहाड़ों या नदी-नालों में आती रहने वाली बाढ़ों और चट्टानों के बह जाने के अतिरंजित भयंकर वर्णन सुना जाते थे। उन भेंट करने वाले भोले लोगों को यह नहीं मालूम था कि कर्नल रल्ली अपने कैम्प में बैठे-बैठे, जांच-पड़ताल के लिये भेजी गई इंजीनियरों और ओवरसियरों की पार्टियों से वायरलेस-टेलीफोन द्वारा बहुत ब्योरेवार सब पूछताछ कर रहे थे।

कर्नल रल्ली को अपने पुराने अभ्यास और नियम के कारण मेहमानों से भेंट स्वीकार करने में बहुत ग्लानि होती थी। वह जानते थे, आदर से लाई हुई भेंटों का प्रयोजन सड़क के रास्ते के चुनाव पर प्रभाव डालना ही था। यदि वह भारत की किसी छावनी में होते तो इन भेंटों को बहुत रुखायी से अस्वीकार कर देते परन्तु वह दूसरे देश, दूसरी प्रकार की नैतिकता और आचार-विचार के वातावरण में थे। उनके मातहत इंजीनियरों ने समझा दिया था कि अफगान की भेंट अस्वीकार करना, उसका बहुत भयंकर अपमान होगा, जैसे उसे बैठने के लिये आसन न देना। इस कठिनाई का कर्नल रल्ली के पास एक ही उपाय था कि वह अतिथि की भेंट के प्रतिदान में पहले से आई भेंट देकर, रिश्वत स्वीकार न करने का अपना निश्चय निबाह लेते थे। सभी इलाकों के लोगो की इच्छा थी कि सड़क उनके इलाके से होकर निकले। कर्नल रल्ली सभी को आश्वासन दे देते थे—यकीन रखिये, सड़क आप सभी लोगों के लिये होगी। वही रास्ता निश्चित किया जायेगा जिससे मुल्क की रियाया को सबसे अधिक फायदा हो सके।

कर्नल रल्ली को स्थानीय कोतवाल और दूसरे अफसरों से भी संदेश मिल चुका था कि उस प्रान्त के गवर्नर—बूजा के अमीर चाहते थे कि खैबर-जलालाबाद सड़क, चिन्ना और मज्जई के इलाके से नहीं बल्कि बूजा के टीले पर से निकाली जाय। कर्नल रल्ली को यह भी मालूम हो गया था कि उनसे पहले जर्मन इंजीनियर मार्खमान, बूजा के टीले पर से सड़क लाने के प्रस्ताव को अव्यवहारिक बता चुका था। कर्नल रल्ली बूजा के इलाके की पहाड़ियों का और नदियों का सर्वे दुबारा करवा चुके थे। बूजा का विस्तृत टीला पहाड़ी नदी 'बरनी' की दो शाखाओं से घिरा हुआ था। प्रत्येक शाखा का विस्तार दो-ढाई सौ फुट था और दोनों ओर काफी दूर तक समतल रेतीले पठार चले गये थे। टीले के चारों ओर का इलाका बियाबान था। वहां किसी प्रकार की उपज नहीं होती थी इसलिये बस्ती भी न थी। दो-ढाई सौ वर्ष पूर्व बूजा के अमीर के पूर्वजों ने अपनी गढ़ी के लिये वह स्थान इसलिये चुना था कि वह प्रदेश शत्रुओं के लिये दुर्गम था परन्तु अब बूजा का अमीर जलालाबाद तक सुविधा का मार्ग चाहता था। अपनी गढ़ी से सड़क के अभाव में उसे अपनी मोटरें और जीपें जलालाबाद में ही रखनी पड़ती थीं। कर्नल रल्ली ने इंजीनियर मार्खमान के निश्चय को ही उचित समझा कि सड़क का रास्ता चिन्ना और मज्जई के इलाके से ही ठीक होगा और उस प्रदेश के लोगों की उचित मांग को पूरा करने का आश्वासन दे दिया। उस रास्ते से बूजा की गढ़ी लगभग सैंतीस मील एक ओर रह जाती थी।

रविवार दोपहर से कुछ पहले जलालाबाद का कोतवाल रल्ली साहब के यहां आया। कोतवाल ने खबर दी कि प्रदेश के गवर्नर, बूजा के अमीर सदरशाही मेहमानखाने में हैं और उन्होंने कर्नल साहब को सलाम भेजा है। गवर्नर की मोटर कर्नल साहब की खिदमत में बाहर खड़ी हुई है।

जलालाबाद में दो दिन पहले से सनसनी थी कि गवर्नर काबुल से लौटते समय वहां ठहरेंगे। कोतवाल, जो शायद कभी ही थाने की गढ़ी से बाहर दिखायी देता था, दो दिन से लगातार घोड़े पर सवार इधर से उधर और उधर से इधर सफाई और तैयारी देखने के लिये चक्कर लगा रहा था। सड़क के गढ़े जल्दी-जल्दी भरे जा रहे थे। कर्नल रल्ली कैम्प में रहते समय नित्य प्रातः छड़ी लेकर दो मील पैदल घूमने जाते थे। उन्हें मुख्य सड़क पर और दूसरी सड़कों पर भी सभी जगह सुबह सशस्त्र सिपाही तैनात दिखायी दिये थे।

वूजा के अमीर, प्रान्त के गवर्नर के रुतवा और अधिकार बहुत बड़े थे। वह अफगानिस्तान के शाह की कौन्सिल का मेम्बर और अफगान फ़ौज का बहुत वड़ा जनरल भी था। गवर्नर की कठोर न्याय-व्यवस्था को भी कई दंत कथायें प्रचलित थीं।

कर्नल रल्ली ने गवर्नर का संदेश पाकर अपनी फौजी वर्दी पहनी और उचित सैनिक औपचारिक ढंग से गवर्नर से मिलने के लिये गये।

"कम इन कर्नल।" गवर्नर ने कुर्सी पर बैठे-बैठे ही वेतकल्लुफी से हाथ वढ़ा कर पुकार लिया और कर्नल का हाथ पकड़े हुये उसे अपने समीप की कुर्सी पर वैठा लिया। गवर्नर आधुनिक पाश्चात्य वेश में था परन्तु सिर पर अस्तर-खानी अफगानी टोपी थी। वह अंग्रेजी वोल रहा था, उच्चारण फ्रेंच या फारसी से प्रभावित था। वातचीत, मौसम और स्थानीय वातावरण से प्रारम्भ हुई। गवर्नर ने कर्नल का हाथ अपने हाथ में लेकर, वहुत आत्मीयता से आंखों में आंखें गड़ाकर पूछ लिया—"यहां किसी किस्म की तकलीफ तो नहीं है आपको? यहां आप हमारे दोस्त और मेहमान हैं। आप तकल्लुफ में अपनी जरूरत और तकलीफ हमसे छिपाइयेगा तो हमें बहुत तकलीफ होगी। हम इसे अफगान मेहमाननवाजी की तौहीन समझेंगे।"

कर्नल रल्ली को गवर्नर का नितान्त निःसंकोच, सौजन्य और मित्रतापूर्ण व्यवहार बहुत भला लगा। गवर्नर ने पूछ लिया—"आप यहां साढ़े तीन महीने से हैं, आपने वर्सई की झील पर सुर्खाब का शिकार तो किया होगा?"

कर्नल रल्ली गवर्नर की शालीन आत्मीयता से आश्वस्त हो चुके थे। हंस कर उत्तर दिया—"मैंने सिर्फ सुर्खाब के परों का जिक्र सुना है और सुना है शायद नायाव होते हैं। सुर्खाब कभी देखा नहीं। शाट गन (शिकार की बन्दूक) मैं साथ नहीं लाया हूं इसलिये कभी ख्याल भी नहीं किया।"

गवर्नर के मुंह से निकला—"ओह!" और समीप खड़े ए० डी० सी० की ओर घूमकर पश्तो में वोला, "एक ट्वेल्व वोर शाट गन और एक विन्चेस्टर राइफल साहव के लिये भेज दो और एक बक्स शिकारी कारतूसों का।"

कर्नल रल्ली ने संकोच अनुभव कर क्षमा मांगी—"रहने दीजिये, रहने दीजिये! इन चीजों का ज्यादा उपयोग नहीं कर सकूंगा। शिकार का शौक मुझे नहीं रहा।"

गवर्नर आदेश देकर कर्नर रल्ली की तरफ घूमकर आग्रह से बोला—"यहां

रह कर शिकार का मौका न चूकिये ! यहां सुर्खाब, फेजेण्ट, मुर्गाबी आपको काफी मिलेगी। ढलवानों पर हिरन, बारहसिंगा और घुरड़ भी मिल जायेंगे। काबुल दरिया की घाटी में चीता भी मिल सकता है।"

गवर्नर ने फिर कर्नल रल्ली की बांह पर हाथ रख कर अनिवार्य अनुरोध किया—"लंच आप यहां खायेंगे। अवसरवश बादल घिर आने से दिन बड़ा सुहावना हो गया है। लंच के बाद आप हमारे साथ वर्सई तक सुर्खाब के शिकार के लिये चलिये। उस झील पर इतना सुर्खाब है कि यों ही हवा में दो कारतूस चला दीजिये, दो परिन्दे नीचे आ गिरेंगे।"

गवर्नर के दूसरे ए० डी० सी० ने मालिक की ताईद की—"वह जंगल और झील सरकारी शिकार के लिये महफ़ूज़ हैं। वहां दूसरे लोग बन्दूक नहीं चला सकते। देहाती सूरज छिपते ही झील के जंगल में चले जाते हैं और परिन्दों को झाड़ियों में से उठा-उठाकर थैलों में भर लाते हैं।"

गवर्नर ने खाने की मेज़ पर बैठते ही कर्नल रल्ली को सम्बोधन किया—"सड़क कब तक मुकम्मल हो जायेगी ?"

"आशा है, अगले साल मार्च तक।"

"हूं, हमारे लड़के की शादी के मौके पर 'हिज़ मैजेस्टी' की गाड़ी बूजा की गढ़ी में दाखिल हो सकनी चाहिये।"

कर्नल रल्ली ने गवर्नर की ओर देखकर कहा—"सर, लेकिन सड़क की लाइन तो चिन्ना और मज्जई की वादियों से.....।"

गवर्नर ने आंखें फैलाकर विस्मय प्रकट किया—"क्या ? सड़क की लाइन के बारे में आपको संदेश नहीं मिला ?"

कर्नल ने उत्तर दिया—"सर, बूजा के दोनों ओर बरनी पर दोनों पुल और सड़क हमेशा खतरे में रहेंगे। चिन्ना और मज्जई की रियाया को दरअस्ल सड़क की बहुत जरूरत है। बूजा के गैर-आबाद इलाके से सड़क ले जाने से रियाया को क्या फायदा ?"

गवर्नर की आंखें और भी अधिक खुल गयीं। गवर्नर ने कर्नल की आंखों में घूर कर अन्तिम बात कह दी—"सरकारी प्रश्नों का निर्णय सरकार करती है, रियाया नहीं।" बात पूरी करके गवर्नर का लहज़ा बदल गया। उसने मेज़ पर पड़ी चार शराब की बोतलों की ओर संकेत किया, "आप पसन्द कीजिये, आपके लिये ढालने का सुख मैं पाना चाहता हूं।"

गवर्नर ने कर्नल रल्ली को आग्रह से कुछ अधिक ही पिलाया और स्नेह से अधिक खाने का अनुरोध करते रहे। शिकार पर साथ जाने से इन्कार का अवसर भी न था।

शिकार के लिये रवाना होते समय गवर्नर ने कर्नल रल्ली को अपने साथ ही जीप पर बैठा लिया। गवर्नर के लिये शिकार का पहले से ही प्रबन्ध था। सड़क पर कुछ-कुछ अन्तर से सशस्त्र सिपाही गवर्नर के सम्मान और सुरक्षा के लिये खड़े हुये थे, विशेषकर पहाड़ी सड़क के कोहनी की तरह आगे बढ़ आये या कांख की तरह पीछे हटे हुये मोड़ों पर।

गवर्नर की जीप और उसके पीछे चलती जीपें पहाड़ की पसलियों पर बहुत ऊबड़-खाबड़ कच्ची सड़क पर अनेक मोड़ लेती हुई, प्रायः आधे घण्टे तक चलती रहीं। गवर्नर का काफिला खूब बड़ी गार में से हंसिये के फलके की तरह घूमी हुई सड़क पर से जा रहा था। जीप अर्धचन्द्राकार सड़क के बीचोंबीच थी तो गवर्नर ने मोटर रोकी जाने का आदेश दिया। पीछे आती मोटरें भी रुक गयीं। गवर्नर की नज़र सड़क के किनारे फैली हुई चट्टान की ओर थी। कर्नल रल्ली ने मोटरों के रोके जाने का कारण समझ लिया। सड़क के किनारे की चट्टान पर तैनात सशस्त्र सिपाही समीप खड़ी बेरी की छाया में राइफल को सिर के नीचे रखे पसरा हुआ था और ज़ोर-ज़ोर से खर्राटे ले रहा था। सिपाही की नींद इतनी गहरी थी कि वह चार जीपों की घर्राहट से भी नहीं चौंका।

गवर्नर ने समीप बैठे ए० डी० सी० को आदेश दिया। ए० डी० सी० जीप से कूद गया। ए० डी० सी० ने पीछे आने वाली जीप में बैठे बाडीगार्ड सिपाहियों को आदेश दिया। सिपाही राइफल लिये सड़क पर कूद गये और सोते हुये सिपाही के चारों ओर खड़े हो गये। ए० डी० सी० ने चट्टान पर खर्राटे लेते हुये सिपाही की कमर पर बूट से जोर की ठोकर दी। सिपाही हड़-बड़ा कर उठा और कन्धे पर राइफल रख कर अटेंशन खड़ा हो गया।

ए० डी० सी० ने बहुत क्रुद्ध स्वर में गाली देकर डांटा—"ससुराल में आकर आराम कर रहा है?"

अपराधी सिपाही ने बहुत दीनता से गवर्नर की ओर देखकर फरियाद की—उसकी एवजी नहीं आई थी, वह पिछले दिन सुबह से ड्यूटी पर खड़ा-खड़ा थक गया था।

ए० डी० सी० के आदेश से अपराधी सिपाही की राइफल ले ली गई।

दो सिपाहियों ने अपनी राइफलें गारद के दूसरे सिपाहियों को थमा दीं और अपराधी सिपाही के जबड़ों, नाक, माथे, होठों और कानों पर पूरी शक्ति से दायें-बायें घूंसे पड़ने लगे। पीटा जाने वाला सिपाही घूंसों के प्रहारों से लड़खड़ा जाता और फिर अटेंशन खड़ा हो जाता। उस पर मार पड़ती जा रही थी। उसे मारने वाले दोनों सिपाही दो-दो, चार-चार प्रहार करके कनखियों से ए० डी० सी० की ओर देख लेते थे। ए० डी० सी० गवर्नर के संकेत के लिये सतर्क था।

पीटने वाले सिपाहियों के हाथ चुटिया गये तो वे अपराधी सिपाही पर फौजी बूटों से प्रहार करने लगे। पीटा जाने वाला सिपाही चोटों से लड़खड़ा जाता और फिर मौन खड़ा हो जाता।

ए० डी० सी० ने गवर्नर की ओर से कोई संकेत न पाकर उसके सन्तोष के लिये सिपाही को राइफल के कुन्दों से मारने का आदेश दिया। अन्ततः अपराधी सिपाही गिर पड़ा और कराहने लगा।

गवर्नर की क्रुद्ध आवाज सुनाई दी—"फरियाद करता है!"

ए० डी० सी० ने अपराधी सिपाही को डांटा—"फरियाद करता है?"

अपराधी पर कुन्दों की मार और भी जोर से पड़ने लगी। सिपाही चुप निश्चल मार खाने लगा।

गवर्नर के संकेत पर अपराधी सिपाही की पिटाई रोक दी गई। उसका शरीर लहूलुहान हो गया था। सिर से भी खून बह रहा था। वह थके हुये कुत्ते की तरह हांफ रहा था। गवर्नर के आदेश से दो सिपाहियों ने उसे उठा कर खड़ा कर दिया। उसे अटेंशन का हुक्म दिया गया।

गवर्नर की ओर से ए० डी० सी० ने अपराधी सिपाही से प्रश्न किया—"अब थकने की फरियाद करेगा?"

अपराधी सिपाही ने सिर हिलाकर इन्कार किया कि वह थकने की फरियाद नहीं करेगा।

गवर्नर के आदेश से उसे राइफल लौटा दी गयी और लहूलुहान सिपाही राइफल कन्धे पर रख मुस्तैदी से अटेंशन खड़ा हो गया।

कर्नल रल्ली न्याय और दण्ड के इस अनुष्ठान को दांत दबाये स्तब्ध देख रहे थे। सिपाही पर पड़ती मार से उनके रोंगटे खड़े हो गये थे और रीढ़ पर पसीने की बून्दें बह गयी थीं।

गवर्नर के संकेत से मोटर चल पड़ी तो उन्होंने वीभत्स काण्ड की समाप्ति की सांत्वना में गहरा सांस ले लिया ।

गवर्नर ने कर्नल रल्ली के चेहरे पर गम्भीरता भांप ली थी । गवर्नर ने मेहमान की असुविधा के लिये क्षमा मांगी—"इस अप्रिय व्याघात के लिये खेद है परन्तु सैनिकों में अनुशासन के शैथिल्य की उपेक्षा नहीं की जा सकती ।"

कर्नल रल्ली ने खांस कर गला साफ करके स्वीकार किया—"हां, अनुशासन के शैथिल्य की उपेक्षा नहीं की जानी चाहिये ।" कर्नल के स्वर से घटना के प्रति विरक्ति छिपी नहीं रह सकी ।

गवर्नर ने कर्नल की विरक्ति भांप कर पूछ लिया—"आप सैनिक अफसर रहे हैं । आपके यहां अनुशासन का ऐसा शैथिल्य देखा जाने पर क्या उचित समझा जाता ?"

कर्नल रल्ली ने अनिच्छा और संक्षेप से उत्तर दिया—"सिपाही की राइफल और नम्बर पेटी ले ली जाती । सैनिक अदालत में उसे उचित दण्ड दिया जाता ।"

गवर्नर की भवें उठ गयीं—"न्याय और दण्ड तो तत्काल उसी जगह हो जाना चाहिये तभी तो उसके उदाहरण का आतंक उपयोगी होता है ।"

कर्नल रल्ली बोल गये—"खैर, हमारे यहां किसी अवस्था में यदि सिपाही को ऐसा अपमानजनक दण्ड देने की मजबूरी हो जाये तो बाद में भरी हुई, संगीन लगी हुई राइफल अपमानित सिपाही के हाथ में नहीं दे दी जायेगी ।"

गवर्नर ने गर्व से कर्नल की आंखों में देखा—"हूं ! शुक्र है परवरदिगार का, हमारी रियाया में खुदा का खौफ़ कायम है ।"

झील पर पहुंच कर गवर्नर ने अतिथि के प्रति सौजन्य से पहले निशाने का अवसर कर्नल को ही दिया ।

कर्नल ने धन्यवाद पूर्वक क्षमा चाही—"अनाभ्यास के कारण मेरा निशाना ठीक नहीं बैठेगा । पक्षी व्यर्थ में भड़क जायेंगे ।"

गवर्नर ने आग्रह किया—"पहले निशाने का हक मेहमान को है ।" और खुद ए० डी० सी० से बन्दूक लेकर कर्नल के हाथ में दे दी ।

झील के किनारे समीप ही झाड़ियों में छः-सात मुर्खाब बसेरा ले रहे थे । कर्नल का मन कुछ देर पहले की घटना से उचाट था । गवर्नर के हाथ कोई शिकार न आने से उन्हें संतोष ही होता । उन्होंने गवर्नर के आग्रह की विवशता

में बन्दूक ले ली। बिना लक्ष्य साधे ही बन्दूक सुर्खाबों के झुण्ड की ओर दाग दी। जंगल में 'धांय' की गूंज के साथ दो सुर्खाब नीचे गिर गये। गवर्नर ने आश्चर्य की मुद्रा में प्रशंसा की—"वल्लाह! वाह, वाह! ऐसा फौरन और अचूक निशाना; कमाल है!" गवर्नर के ए० डी० सी० और दूसरे अहलकारों ने भी गवर्नर की प्रशंसा में सहयोग दिया।

कर्नल ने धन्यवाद पूर्वक बन्दूक गवर्नर की ओर बढ़ा दी और मुस्कराया—"श्रेय मुझे नहीं है। निशाना तो लिया भी नहीं था।"

गवर्नर ने विस्मय प्रकट किया—"तो फिर परिन्दे कैसे गिर गये?"

"खुदा के खौफ़ से!" कर्नल हलके कहकहे से हंस दिया।

कर्नल की बात से गवर्नर की आंखों में रोष आ गया। उसने शिष्टता बनाये रखने के लिये मुस्कराना चाहा परन्तु उसका असन्तोष छिपा न रहा।

मन की उद्विग्नता छिपाने के लिये गवर्नर ने शिकार की ओर ध्यान दिया। उसने दो बार निशाने लिये। दोनों फायर निष्फल रहे। गवर्नर ने और फायर नहीं किये। गवर्नर का निशाना असफल होने के खेद और सहानुभूति में पार्टी के दूसरे लोगों ने भी निशाना लेना उचित नहीं समझा। शिकार के लिये आयी मंडली में स्तब्धता छा गयी। गवर्नर गाड़ी की ओर मुड़ गया।

शिकार से लौटते समय भी कर्नल और गवर्नर एक ही जीप पर थे। उन दोनों में कोई बातचीत नहीं हुई। गवर्नर का चेहरा बहुत भारी हो गया था।

कर्नल के कैम्प के समीप गवर्नर ने गाड़ी रुकवायी। कर्नल को विदा दे गवर्नर ने कूटनीतिक मुस्कान से 'गुड बाई' कहते हुये कर्नल से हाथ मिलाया और कह दिया—"आशंका है, शायद यहां का जलवायु आपको अनुकूल नहीं बैठेगा।" गवर्नर की चेतावनी बहुत स्पष्ट थी।

कर्नल रल्ली को वातावरण आतंक से बोझिल जान पड़ने लगा। 'खुदा के खौफ' का दबाव हृदय और मस्तिष्क पर अनुभव होने लगा। उस रात उन्हें नींद भी बहुत देर से आयी। दूसरे दिन वे जलालाबाद से काबुल चले गये और राजधानी स्थित यू० एन० ओ० के दफ्तर में पूरी घटना की सूचना देकर भारत लौट आये।

●

नारद-परशुराम सम्वाद

नारद जी देव-योनि हैं। स्वर्ग में निवास करते हैं। अतीत में नारद जी को देव-कार्यों से अनेक बार भूलोक में आना पड़ा था। स्वर्ग की तुलना में मर्त्यलोक हेय है परन्तु नारद जी मर्त्यलोक में अनेक बार आ चुके हैं। मनुष्यों की संगति बार-बार करने से नारद जी के मन में इस लोक के लिये भी आकर्षण बैठ गया है।

स्वर्ग में शाश्वत सुख ही सुख है। वहां सदा सब कुछ एकरस रहता है। स्वर्ग के निवासी देवी-देवता 'कोल्ड स्टोरेज' में रखे हुये फलों की भांति परिवर्तन, जरा और मृत्यु से मुक्त रहते हैं। देवताओं की शारीरिक-मानसिक स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं आता। उनके अनुभव और विचार कभी नहीं बदलते। वे सुख-दुख की तुलना, जीवन के परिवर्तनों, विभिन्नता और वैचित्र्य के रस से परिचित नहीं होते हैं इसलिये वे स्वर्ग की एकरसता से ऊबते नहीं। देवता 'मोनोटनी' और 'बोर' आदि शब्दों का प्रयोग नहीं करते। वे सतत् एकरस परमानन्द में सन्तुष्ट रहते हैं परन्तु नारद जी को मर्त्यलोक में बार-बार आने से परिवर्तन और वैचित्र्य का चसका लग चुका है। वे स्वर्ग की मोनोटनी से बोर हो जाते हैं तो देवराज के 'स्पेशल कारेस्पांडेंट' के रूप में पृथ्वी की ट्रिप कर लेते हैं।

नारद जी भूलोक में आना चाहते हैं तो यात्रा के लिये अनुकूल समय का विचार करना पड़ता है। स्वर्ग 'एयर कंडीशन्ड' और 'वेदर कंडीशन्ड' है। वहां सदा वसंत ऋतु रहता है। स्वर्ग के वसंत में पृथ्वी के वसंत ऋतु की तरह धूल और झंझा भी नहीं होती। नारद जी को पृथ्वी के स्वर्ग का क्या प्रलोभन हो सकता है? अलबत्ता धूल से नाक और गला खराब हो जाने की आशंका जरूर हो सकती है। होली की ऋतु में उच्छृंखल लौंडे-लपाड़ों से

दाढ़ी और वीणा की दुर्गति की भी आशंका हो सकती है इसलिये उन्होंने वर्षा ऋतु के अन्त में पृथ्वी पर आना पसन्द किया। उस समय पृथ्वी वर्षा से धुल कर शस्य-श्यामला बनी रहती है।

नारद जी ने इस बार वर्षा ऋतु के अन्त में पृथ्वी का टूर किया। इसका एक और भी कारण है। भूलोक के लोग अतीत की तुलना में बहुत बदल चुके हैं परन्तु भूलोक के अन्य देशों की अपेक्षा भारत के लोगों की अतीत में बहुत अधिक आस्था है। यों तो भारत के लोगों का जीवन-व्यापार भी सत्य, त्रेता और द्वापर युगों की तुलना में बहुत बदल गया है परन्तु इस देश के लोगों की श्रद्धा अब भी उन्हीं युगों के आदर्शों के प्रति है, इसलिये भारत के लोग वर्ष में एक बार, त्रेता युग की एक महान घटना की स्मृति 'विजय-दशमी' के उत्सव के रूप में मना लेते हैं। भारत के नगर-नगर, ग्राम-ग्राम में राम-लीला के रूप में उस घटना की पुनः अवतारणा की जाती है। नारद जी को भारत की पुण्य भूमि पर उसी समय आना अच्छा लगा।

नारद जी देव-योनि हैं परन्तु पृथ्वी पर आकर मानव स्वभाव के अनुसार आचरण करना उचित समझते हैं। मानवों का स्वभाव है कि यात्रा, भोज, समाज, लीला और उत्सव में मित्रों की संगति से अधिक रस पाते हैं। नारद जी के अतीत के परिचित हनुमान, परशुराम, अश्वत्थामा आदि महाप्राण पुरुष अमर होकर अब भी मर्त्यलोक में विद्यमान हैं। नारद जी ने लीला देखने के समय एक परिचित को साथ ले लेना चाहा।

संगति के लिये साथी चुनते समय भी कुछ सोचना होता है। नारद जी देवराज के लिये मर्त्य लोक से आधुनिक राजनीतिक समस्याओं के सम्बन्ध में विशेष संवाद लेने आये। ऐसे गम्भीर प्रयोजन के लिये परशुराम जी के समान कर्मयोगी तत्ववेत्ता ही सहायक हो सकते थे इसलिये नारद जी ने परशुराम जी की संगति उचित समझी।

नारद जी जानते थे, परशुराम जी निष्क्रिय तो बैठे नहीं होंगे। वे पुराने स्वभाव से सामयिक राजनीति, साहित्य और ज्योतिष-विज्ञान में रस ले रहे होंगे। नारद जी ने स्वर्ग के 'इन्फर्मेशन डिपार्टमेन्ट' से सूचना ले ली थी कि परशुराम जी छद्म वेष धारण करके लक्ष्मणपुर में निवास कर रहे हैं।

ज्ञानी परशुराम जी को किसी भय के कारण छद्म वेष की आवश्यकता नहीं है। यह सावधानी इसीलिये है कि यदि कलिकाल के लोग परशुराम जी

के अजर-अमर होने का तथ्य जान जायें तो उनके लिये स्वाध्याय और चिन्तन का समय ही न रहे। कलिकाल के विश्वासी लोगों की असंख्य भीड़ दर्शनार्थ को उन्हें घेरे रहे। पत्रों के प्रतिनिधि उनका इन्टरव्यू लेने के लिये मंडराते रहें। उनके खान-पान और प्रत्येक व्यवहार पर निबन्ध लिखे जाते। कलि के प्रसिद्ध वैज्ञानिक उनके अमरत्व का रहस्य जानने के प्रयोजन से उनके रक्त की बूंद-बूंद परीक्षा करने के लिये मांग लेते और कोई उनके मस्तिष्क की परीक्षा के लिये उनकी कपाल-क्रिया करने को उत्सुक हो जाता। सर्कस के लिये जीवों को पकड़ने वाला कोई साहसी उनके विषय में समाचार पा लेता तो उन्हें पिंजड़े में बन्द करके, उनके दर्शन के लिये टिकट लगाकर आमदनी का उपाय कर लेता।

परशुराम जी नारद जी के आगमन से बहुत प्रसन्न हुये। उनका उचित आतिथ्य किया। जल-पान के लिये मिठाई, फल और चाय प्रस्तुत की। यात्रा के पश्चात थकावट दूर करने के लिये नारद जी को कुज्जी भर, मधुर कम और कषाय अधिक, गरम उबलता हुआ पेय रुचिकर न जान पड़ा। उन्होंने तृषा शान्त करने के लिये कमण्डल भर सोम-रस की इच्छा प्रकट की।

परशुराम जी ने आतंक के संकेत में दांत से जिह्वा काट कर दबे हुये स्वर में कहा—"देवर्षि, इस युग में सुरापान की बात, इस देश की राज-नियम को मानने वाली और धर्म-प्राण प्रजा के सम्मुख न कहना। कलियुगी रामराज्य के ऋषि और स्मृतिकार (ला-गिवर) महात्मा गांधी सतयुग के ऋषियों के पेय को इस युग में निषिद्ध और पाप-कर्म बताकर 'प्रोहिबिशन' धर्म की स्थापना कर गये हैं। यदि मद्य-पान का आग्रह है तो कल प्रातःकाल सूर्योदय के समय, नीरा नामक वैष्णव मद्य का प्रबन्ध हो जायेगा। गांधी-समाज में नीरा 'सुन्नतउल रसूल' (ईश्वर के प्रतिनिधि द्वारा प्रयोग की गयी पवित्र) मानी गयी है।"

स्वर्ग से आये अतिथि को लक्ष्मणपुर की गर्मी से असुविधा न हो, इस विचार से परशुराम जी ने उन्हें 'एयर कंडीशंड' कमरे में ठहराया था और कमरे में एक 'एयर सर्कुलेटर' भी रखवा दिया था। मध्याह्न भोजन के बाद नारद जी दिवा-निद्रा लेने के लिये लेटे तो परशुराम जी ने स्वयं आकर उनकी सुविधा और आवश्यकता के विषय में पूछ लिया—"देवर्षि, यदि इस कक्ष का तापमान आपके अभ्यास के लिये अधिक शीत या ऊष्ण प्रतीत हो अथवा वायु-वेग को न्यूनाधिक करने की इच्छा हो तो समीप पड़ी विद्युत-गुटिका को

स्पर्श कर दीजियेगा। सेवक प्रस्तुत हो जायेगा और आपके आदेशानुसार शीत और ऊष्णता को व्यवस्थित कर देगा अथवा वायु-वेग को न्यूनाधिक कर सकेगा।"

नारद जी ने परशुराम जी की ओर विस्मय से देखकर पूछा—"ज्ञानीवर, इस गुटिका के स्पर्श-मात्र से परोक्ष में खड़े सेवक को मेरे मन का सन्देश मिल जायेगा ? सतयुग में तो ऐसी सिद्धि योग-बल से ही सम्भव थी !"

परशुराम जी ने मुस्कराकर उत्तर दिया—"देवर्षि, इस युग में ऐसी साधारण बात के लिये योगिक सिद्धि की आवश्यकता नहीं रही। आप चाहेंगे तो इस युग में आपका सन्देश बिना किसी योग समाधि के 'अतन्तु यंत्र' द्वारा सहस्रों योजन दूर भी भिजवा दिया जा सकेगा।"

नारद जी ने और भी विस्मय प्रकट किया—"ज्ञानीवर, क्या आपने यह भी कहा कि शूद्र सेवक ही प्रस्तुत होकर कक्ष में ऋतु को मनोनुकूल और वायु की गति को न्यूनाधिक कर सकेगा ? सत्य, त्रेता, और द्वापर युगों में तो ऐसा तप और सिद्धि केवल तपोधन ऋषियों के सामर्थ्य की ही बात थी।"

परशुराम जी ने स्वीकार किया—"देवर्षि सत्य कहते हैं, उस युग में ऐसी सामर्थ्य सिद्धि प्राप्त करने वाले ऋषि व्यक्ति को ही प्राप्त थी। आध्यात्मिक सिद्धि को ऋषि दूसरे व्यक्तियों को नहीं दे सकते थे। इस युग में ऐसी सामर्थ्य पार्थिव सिद्धि प्राप्त करने वाले वैज्ञानिकों ने मनुष्य-मात्र के लिये हस्तामलक कर दी है। वैज्ञानिकों ने यन्त्रों से प्राकृतिक शक्तियों को पालतू पशुओं के समान मनुष्य के वश कर दिया है।"

परशुराम जी के उत्तर से नारद जी अपनी दाढ़ी पकड़े चिन्ता में माथा झुकाये रह गये। परशुराम जी ने अतिथि की चिन्ता का कारण पूछा।

परशुराम जी का प्रश्न सुनकर नारद जी ने माथा उठाया। उनके माथे पर चिन्तासूचक त्योरियां बनी हुई थीं। गम्भीर श्वास की फुंकार छोड़कर वे बोले—"ज्ञानीवर, मैं यही सोच रहा हूं कि मर्त्यलोक के प्राणी जब अग्नि देवता की शक्तियों पर अधिकार करके लीलैव शीत और ऊष्णता का नियंत्रण करने लगे हैं, वायु देवता की शक्तियों पर अधिकार करके वे उसकी गति पर नियंत्रण कर रहे हैं, वरुणदेव की शक्तियों पर भी उन्होंने अधिकार कर लिया है। अब तो वे चन्द्रलोक तथा अन्य लोकों तक मार्ग की व्यवस्था कर रहे हैं। कहिये, मनुष्य और देवता में भेद और अन्तर ही क्या रह जायेगा ?

देवता किस बल से मनुष्य पर शासन करेगा और मनुष्य क्यों देवता की पूजा करेगा ?"

परशुराम जी ने मुस्कराकर नारद जी को आश्वासन दिया—"देवर्षि, आप की चिन्ता व्यर्थ है। आप मर्त्यलोक में परस्पर-विरोधी प्रवृत्तियों के अस्तित्व से परिचित नहीं हैं। यदि मर्त्यलोक के वैज्ञानिकों ने मनुष्य का सामर्थ्य बढ़ा कर, उसे दैवी शक्तियों से स्वतंत्र कर दिया है तो महात्मा लोग मर्त्यलोक में देवों की सत्ता को अक्षुण्ण बनाये हैं। वैज्ञानिकों ने मनुष्य को आविष्कारों से इतनी शक्ति दे दी है कि वह अपने भाग्य का निर्माण कर सकता है। देवता की सहायता उसके लिये अनावश्यक हो गयी है परन्तु महात्माओं के पास भी अन्ध-विश्वासों की शक्ति है। वे अन्ध-विश्वासों के बल से मनुष्य को कभी आत्मनिर्णय का अवसर नहीं पाने देंगे। अन्ध-विश्वासों के प्रभाव से मनुष्य देवताओं के समान समर्थ हो जाने पर भी देवताओं की कृपा की याचता करता रहेगा, देवताओं के प्रतिनिधि महात्माओं के सामने गिड़गिड़ाता रहेगा। महात्माओं के रहते देवताओं को मनुष्य के स्वतन्त्र हो जाने की आशंका करने की आवश्यकता नहीं।"

नारद जी ज्ञानी परशुराम जी से आश्वासन पाकर विश्राम के लिये लेट गये। संध्या समय नारद जी ने आतिथेय से रामलीला देखने के लिये चलने का प्रस्ताव किया।

परशुराम जी कुछ संकोच से बोले—"देवर्षि, स्वर्ग में रहकर आपने अजर होने का गुण पाया है इसलिये अब तक आप में बाल-युग की प्रवृत्तियां भी बनी हुई हैं। इस युग में गम्भीर स्कालर और कल्चर्ड लोगों को लीला में जाना शोभा नहीं देता। वहां बहुत भीड़-भड़क्का होता है। वहां मिल का बना कपड़ा पहनने वाले हीन स्थिति के लोगों के धक्के सहने पड़ते हैं। चलिये, सिनेमा चलिये, वहां आपको इस युग की अप्सराओं और गन्धर्वों के दर्शन करायेंगे।"

नारद जी ने उत्तर दिया—"ज्ञानीवर, इसमें बाल-प्रवृत्ति की क्या बात है ? हम मर्त्यलोक में आये हैं तो देवराज को यहां के जन-साधारण के क्रिया-कलाप की रिपोर्ट देनी होगी। भगवान ने हमारे शाप से मनुष्य रूप धारण किया था तो वे मनुष्यों की ही भांति व्यवहार करते थे। मर्त्यलोक में आकर हमें भी साधारण मनुष्यों का व्यवहार करना चाहिये। गन्धर्वों और अप्सराओं

को तो देवराज के 'ओपेरा' और थियेटर' में नित्य ही देखते रहते हैं। लीला में ही चलिये, देखा जाय, अपने पूर्वजों के प्रति आज के भारतीयों की भावना क्या है ?"

परशुराम जी अतिथि का मन रखने के लिये उनके साथ लीला के मण्डप की ओर चल दिये। परशुराम जी लीला के मंच पर दस-दस, बारह-बारह वर्ष के छोकरों को कमची के धनुप और सेंठे के बाण लिये उछलते-कूदते देखकर बहुत खिन्न हुये।

परशुराम जी नारद जी से बोले—"देवर्षि, लौट चलिये ! जिन्हें हमने मर्यादा पुरुषोत्तम स्वीकार किया था, उनका ऐसा उपहास हमें सह्य नहीं है। यह हमारा भी उपहास है कि हमने ऐसे कुलांचे भरते छोकरों को मर्यादा पुरुषोत्तम की उपाधि दे दी थी।"

नारद जी ने परशुराम जी को समझाया—"ज्ञानीवर, रूपक में क्या है ? इन लोगों की भावना तो आदर की है। जैसे इनके विश्वास और कल्पना हैं, वैसे ही इनके भगवान हैं। आपने स्वयं कहा था—यह व्यवस्था विश्वास के बल पर ही चल रही है। असमर्थ मनुष्य पाषाण में ही देवत्व की भावना करके, देवता के सन्मुख अपनी दीनता का विश्वास पूरा कर लेता है। मनुष्य तो कभी देवता को देख नहीं पाता, विश्वास से ही देवता के अस्तित्व को स्वीकार करता है। देवता को किस बात की कमी है ! मनुष्य द्वारा दिये प्रसाद से देवता का क्या बनता बिगड़ता है। पूजा का प्रसाद तो केवल मनुष्य के दैन्य की स्वीकृति है। देख लीजिये, यह लोग कुलांचे भरते छोकरों को ही भगवान मान कर उनके चरण पूज रहे हैं !"

परशुराम जी अतिथि के लिहाज में मन मारे, मौन बैठे महापुरुषों के विद्रूप की लीला देखते रहे। लीला में राम ने धनुष भंग किया। मंच पर जटा-जूटधारी, त्रिपुण्ड लगाये और मूंज का जनेऊ पहने, पांव पटकते हुये एक व्यक्ति ने परशुराम की भूमिका में प्रवेश किया। मंच का परशुराम धनुष तोड़ने वाले को अत्यन्त अभद्रता से सामने आने के लिये ललकारने लगा।

परशुराम जी को अपने रूप और व्यवहार का यह विद्रूप सह्य नहीं हुआ। उनके नेत्र लाल हो गये। नारद जी का हाथ पकड़ कर दबे हुये परन्तु क्रुद्ध स्वर में बोले—"देवर्षि, आपको महापुरुषों की यह विडम्बना सह्य है तो आप बैठिये, हम जा रहे हैं !"

नारद जी इच्छा न होने पर भी लीला से उठकर आतिथेय के साथ चल दिये। नारद जी का अपना स्वभाव ठहरा, परशुराम जी के क्रोध से उन के मन में विनोद के बुदबुदे उठने लगे। नारद जी सड़क पर एकान्त देखकर परशुराम जी से बोले—"ज्ञानीवर, यह सत्य है कि अज्ञानी लोगों ने आपकी भूमिका में आपका रूप, आपके सम्मान योग्य प्रस्तुत नहीं किया। आप उसके लिये क्या क्रोध कीजियेगा? वे जैसी कल्पना राम की कर सके हैं, वैसे ही परशुराम की कर पाये हैं। यह लोग सहस्रों वर्ष पुरानी घटनाओं को क्या जानें? हम लोगों ने उन घटनाओं में भाग लिया था। हम अतीत की ही चर्चा करें। त्रेता युग में राम के हाथों शिव का धनुष टूट जाने से, आपके क्रोध का समाचार सुनकर हमें भी बहुत विस्मय हुआ था। धनुष खींचे जायेंगे तो टूटेंगे भी। जो धनुष प्रत्यंचा चढ़ाने से ही टूट जाय, उस निरर्थक धनुष के टूट जाने पर क्या क्रोध?"

परशुराम जी ने उत्तर दिया—"देवर्षि, यह तो हम भी जानते थे कि धनुष पुराना था। सभी जानते थे कि वह धनुष उपयोग के योग्य नहीं था। वह धनुष तो हमारे गुरु जगद्वन्द्य शिव की स्मृति-मात्र था। वह क्या खिल-वाड़ की वस्तु था? उसके टूट जाने से हमें क्रोध न आता? जनक को ही क्या सूझा था जो उस पुराने स्मृति-चिन्ह पर लोगों की शक्ति की परीक्षा करने चले थे। आप ही समझ लीजिये, उस समय का क्षत्रिय समाज जितना क्लीव हो चुका था। सब क्षत्रिय राजा उस धनुष के नाम से ही आतंकित हो गये। राम को छोड़कर अन्य किसी क्षत्रिय ने उस धनुष को छूने का साहस नहीं किया। राम तो आतंकित हो जाने वाले व्यक्ति नहीं थे।

'हमें तो क्रोध क्षत्रियों की स्पर्द्धा पर था। आप जानते हैं, हमने इक्कीस बार क्षत्रिय-मात्र को पराजित किया था। उस समय क्षत्रिय हमारे भय से पुत्र-कलत्र को छोड़कर वन और कन्दराओं में जा छिपते थे। खोजने पर भी क्षत्रिय युयुक्ष नहीं मिलता था। हमें तो यही जान पड़ा कि ऐसे कायर लोगों ने हमारा अपमान करने के लिये ही हमारे गुरु का धनुष तोड़ दिया। अस्तु··· छोड़िये उस बात को।"

नारद जी की जिज्ञासा बढ़ी, बोले—"ज्ञानीवर, सत्य कहते हैं। क्षत्रिय जाति ने आपके श्रीचरणों से दलित होकर, समूह-संहार सह कर भी आपके क्रोध को पुनः जागरित कर दिया था। समाचार सुनकर हमें तो यही आशंका

हुई थी कि क्षत्रिय जाति के लिये बाइसवीं बार प्रलय आ गयी। क्षत्रिय-कुल-उत्पन्न राम का क्या होगा ? परन्तु राम को तो आपने क्षमा ही कर दिया।"

राम नाम सुनकर परशुराम जी के क्रोध का उफान शान्त हो गया, बोले—"देवर्षि, क्षत्रियों के परिग्रह की अति स्पर्धा और अहंकार के कारण ही हमें उन पर क्रोध था। राम में वे दुर्गुण नहीं थे। देवर्षि, आपको याद नहीं, उस समय क्षत्रियों में एक ओर अतिभोग, परिग्रह का अतिलोभ, वंश और शासन का अहंकार और दूसरी ओर अतिव्यसनजनित क्लीवता कितनी बढ़ गयी थी ! उस समय के क्षत्रियों ने ब्राह्मण और अन्य वर्ण-मात्र का जीवन कठिन कर दिया था। उनके मन में मनुष्य के प्रति आदर का भाव रह ही नहीं गया था।"

परशुराम जी ने नारद जी को याद दिलाया—"देवर्षि, आप जानते हैं हमारे पिता महर्षि जमदग्नि कितने धर्मपरायण 'अपरिग्रही' आत्माभिमुख थे। हमारी माता रेणुका परम धर्मनिष्ठ और सती थीं परन्तु क्षत्रिय राजा चित्ररथ ने उन्माद में औचित्य भूलकर, हमारी माता के सम्मुख ऐसी उच्छृंखल काम-क्रीड़ा की कि हमारी तपस्विनी माता के मन में वासना का प्रबल उद्रेक हो गया। कामासक्ति से उन्मत्त माता, हमारे वृद्ध, शिथिल पिता से रति के लिये आग्रह कर बैठीं। राजा चित्ररथ ने हमारे परलोकाभिमुख माता-पिता का जीवन विषमय कर दिया। पिता जी की खिन्नता और पीड़ा असह्य हो गयी। मां उनके लिये असह्य संताप का कारण बन गयी थी। पिता जी को पत्नी के वध का आदेश दे देना पड़ा। इस सम्पूर्ण घटना का उत्तरदायित्व क्षत्रिय राजा चित्ररथ की उच्छृंखलता ही थी।"

नारद जी ग्रीवा से अनुमोदन का संकेत करके सहानुभूति से बोले—"ठीक कहते हैं ज्ञानीवर परन्तु एक क्षत्रिय की उच्छृंखलता के कारण सम्पूर्ण क्षत्रिय जाति-मात्र का संहार.....।"

परशुराम जी ने नारद जी को टोक दिया—"एक क्षत्रिय की उच्छृंखलता ? राजा कार्तिकेय ने क्या किया ? क्षत्रिय राजा कार्तिकेय हमारे आश्रम में आया। पिता जी ने उदारता से उसका सत्कार किया परन्तु क्षत्रिय राजा ने पिता जी की उदारता और सत्कार का क्या प्रतिकार दिया था ? उसने पिता जी की उदारता और सौजन्य को उनका भय और दैन्य समझ लिया। कार्तिकेय को गायों की क्या कमी थी परन्तु उसने अहंकार के उन्माद में पिता जी का अपमान और विद्रूप करने के लिये पिता जी की गैया खुलवा ली। एक गैया से हमारा

भी कुछ बन और बिगड़ नहीं जाता था परन्तु यह हमारे कुल के स्वत्व का अपमान था। यदि हम उनके 'शिक्षण' के लिये, एक गैया के बदले उसके सहस्र क्षत्रिय साथियों को समाप्त न कर देते तो वह पृथ्वी पर किसी को चैन न लेने देता। आपको याद होगा, जब हमने 'समंत पंचक' में कार्तिकेय के सहस्र भटों के सिर उतार कर रक्त का सरोवर बना दिया था, लोगों ने उस सरोवर में स्नान करके कार्तिकेय के आतंक और भय से मुक्ति अनुभव की थी।"

नारद जी ने ग्रीवा के संकेत से अनुमति देकर जिज्ञासा की—"ज्ञानीवर, मान लिया कि दो राजाओं ने·····।"

परशुराम जी उत्तेजना से बोल पड़े—"देवर्षि, दो राजाओं की ही बात नहीं, उस काल में प्रत्येक क्षत्रिय राजा ने सम्पूर्ण पृथ्वी को जीत लेना अपना अधिकार और धर्म मान लिया था। उनके परिग्रह की स्पर्धा की कोई सीमा नहीं रही थी। जिस क्षत्रिय राजा को अपने बल-पौरुष का गुमान हो जाता, वह सब को पराभूत और पददलित करने के लिये राजसूय यज्ञ और अश्वमेध यज्ञ करने लगता था। वे लोग जीवन की आवश्यकता के लिये नहीं, केवल विजयमद और अहंकार की तृप्ति के लिये दूसरों की भूमि छीन कर, दूसरों को अपमानित करते थे। अपनी पहुंच तक सब देश विजय करके उस भूमि का दान कर देते थे और फिर पुनः देश-विजय का विनोद आरम्भ कर देते थे। उनके ऐसे ही कर्मों की स्तुति—उनके चारणों वाल्मीकि और कालिदास जैसे कवियों ने की है। राजा क्या, क्षत्रिय-मात्र दूसरों को अपने सामने नत-मस्तक और हीन देखना चाहते थे।"

"देवर्षि, हमें तो क्षत्रियों के राज्य का लोभ नहीं था। हमने उनकी भूमि पर अधिकार नहीं किया। ब्राह्मण तथा अन्य वर्णों को क्षत्रियों के दमन से मुक्त करने के लिये ही हमने दक्षिण में कोंकण देश खोज कर ब्राह्मणों को दे दिया था। उस समय समाज की रक्षा के लिये क्षत्रिय का उच्छृंखल शासन समाप्त करना आवश्यक हो गया था।"

नारद जी बोले—"ज्ञानीवर, समाज के लिये हानिकर व्यक्ति को समाप्त कर देना न्याय माना गया है परन्तु समूह तो स्वयं समाज होता है। समूह का वध·····।"

परशुराम जी ने तुरन्त उत्तर दिया—"देवर्षि, समाज की रक्षा नियम अथवा धर्म से होती है। जो धर्म और नियम को नष्ट करता है वह व्यक्ति

हो या समूह, समाज के लिये हानिकारक है। उसका क्षय आवश्यक है। उस समय क्षत्रिय का आधिपत्य अधर्म का रूप ले चुका था। उसका निवारण आवश्यक था।"

नारद जी के श्मश्रु कुछ थिरके परन्तु वे गाम्भीर्य बनाये रहे। उन्होंने प्रश्न किया—"ज्ञानीवर, धर्म के तत्व का निश्चय तो कठिन है। धर्म के विषय में मनुष्यों में मतभेद रहता है और कभी स्वयं व्यक्ति के सम्मुख भी दुविधा उत्पन्न हो सकती है। उदाहरणतः आपने पिता के आदेश का पालन धर्म मान कर माता का वध कर दिया परन्तु माता की रक्षा और आदर भी तो धर्म है। आपके चारों ज्येष्ठ भ्राताओं ने उसी धर्म के विचार से पिता के आदेश को अस्वीकार कर दिया था। आप धर्मद्रष्टा हैं, आपने इस धर्म के द्वन्द्व का निर्णय किस प्रकार किया ?"

परशुराम जी बोले—"देवर्षि, मर्त्यलोक में तो एक काल में एक ही धर्म हो सकता है। मानव के लिये वही कर्म, धर्म होता है जो कुल और समाज का रक्षक और सम्वर्धक हो। आप क्या भूल गये ? उस समय हमारे समाज में पितृ-सत्तात्मक कुल की व्यवस्था थी जिसे आजकल पश्चिमी मानव-विज्ञान शास्त्री 'पैट्रियार्कल फैमिली सिस्टम' कहते हैं। पिता ही कुल के विधायक थे। यदि यह घटना मातृ-सत्तात्मक कुल-व्यवस्था (मैट्रियार्कल फ़ैमिली सिस्टम) के दिनों में हुई होती तो माता के आदेश से, उन्हें खिन्न करने वाले पिता को ही बलि हो जाना पड़ता। आपको उस घटना से क्यों विस्मय होता है ? इस युग के लोगों को विस्मय हो तो एक बात है क्योंकि आज की व्यवस्था में स्त्री-पुरुषों और व्यक्तियों के जीवन पर कुल का अधिकार नहीं, अपितु राष्ट्र का अधिकार माना जाता है। आज समाज में पिता के आदेश का धर्म उस प्रकार पूरा करने से फांसी की ही सजा मिलेगी। अस्तु, जो भी हो, हमारा कर्म, धर्म ही था; इसीलिये पुराणों में रिकार्ड मौजूद हैं कि हमारे उस धर्म-पालन के प्रतिफल में पिता के दिये वरदान से सिर कटी हुई माता पुनर्जीवित हो गयी थी और उन्हें अपने वध का आभास भी नहीं हो पाया था। यह चमत्कार धर्म की शक्ति के बिना कैसे सम्भव था ?"

इस बार नारद जी की मुस्कान छिप न सकी। उन्होंने पूछ लिया—"ज्ञानीवर, पुराण की कथा पर विश्वास की बात जाने दीजिये। आप ही बताइये, क्या इस युग के पार्थिव ज्ञान के आधार पर तथ्यों का निरूपण करने वाले इस

युग के लोग ऐसी बातों पर विश्वास कर लेंगे ?"

नारद जी की मुस्कान से परशुराम जी खिन्न हो गये थे। उन्होंने झुंझला कर उत्तर दे दिया—"यदि लोग विश्वास को छोड़कर पार्थिव विज्ञान से तथ्य निरूपण का ही भरोसा करने लगेंगे, तो वे न आपकी और न हमारी अमरता में विश्वास करेंगे और न देवताओं की शक्ति में ही।"

●

चौरासी लाख जोनि

गुरो अर्थात् गुरांदित्ती बहुत सीधी थी, इतनी सीधी कि उसकी सास और ननद भी उसे सीधी कहती थीं। पड़ोसिनों से यदि कभी कलह और झंझट होता था तो उसकी सास और ननद से ही, गुरो से कभी नहीं।

गुरो का ब्याह अच्छी बड़ी उम्र में हुआ था। विवाह के समय वह सत्रह वरस की हो चुकी थी इसलिये मुकलावा (गौना) भी ब्याह के साथ ही हो गया था। गुरो की ससुराल की स्थिति अच्छी थी। मुहल्ले में उसके ससुर का मकान सबसे बड़ा था। मकान में खूब बड़ा आंगन था। आंगन में दो भैंसें बंधी रहती थीं, फिर भी कुछ असुविधा न होती। मकान की ड्योढ़ी पक्की थी।

गुरो की डोली ससुराल पहुंची थी तो ड्योढ़ी पर बहू के स्वागत और उल्लास में तीनों तरह के बाजे बज रहे थे। मचान पर शहनाई बज रही थी, देसी नगाड़ा और नरसिंहा बज रहा था, शहर का अंग्रेज़ी बाजा भी बज रहा था। उसके देवर ने आतिशबाजी में गोले और अनार चलाये थे। घर के सब लोग बढ़िया, कीमती, रंगीन और रेशमी कपड़े पहने हुये थे। घर की कुतिया 'बेनी' पर भी रेशमी झूल बंधी हुई थी। रेशमी झूल पर गोटे-किनारी की मगजी थी। गुरो ने समझ लिया था कि घर में बेनी का बहुत लाड़-प्यार है।

गुरो ने अपनी मां से ही धर्म में दृढ़ विश्वास की शिक्षा पायी थी। चुन्नी ओढ़ना सीख लेने के समय से ही उसने विष्णु सहस्रनाम कंठस्थ कर लिया था। ब्रह्मा, विष्णु, महेश, राम, कृष्ण, हनुमान जी, दसों गुरु और सलूही के पीर—सभी को वह श्रद्धा से स्मरण करती थी।

गुरो की मां उसे बचपन से ही उपदेश देती आयी थी कि ससुराल जाकर तेरा धर्म सास-ससुर, जेठ-जिठानी, ननद सबकी सेवा करना होगा।

गुरो ने ससुराल आते ही सास और ननद के आदेश की प्रतीक्षा किये

बिना सबकी सेवा का धर्म अपना लिया था। ससुर लाला जी संध्या समय दुकान से लौटते तो गुरो उनके लिये आंगन में खाट डाल कर खेस बिछा देती। लोटे में पानी ले परात में उनके पांव धो देती और फिर कली में ताजा पानी डाल, चिलम भर कर हुक्का उनकी खाट के पास रख देती। प्रातः नींद टूटने पर लाला जी खांसते हुये आंगन में निकलते तो लोटे में पानी और हरी दातुन लेकर मुंह धुलाने के लिये तैयार रहती। उसी समय हुक्का ताजा कर देती। सास रात को बिस्तर पर जाती तो उसकी पीठ और पिंडलियां दबा देती। गुरो में शील इतना था कि घर के सब काम और सेवा निबाहते समय हाथ भर का घूंघट चेहरे पर लटका रहता। ससुर और पड़ोस के बड़े-बूढ़ों ने कभी उसका बोल नहीं सुना था। घर के चौका-बर्तन और भैंसों की देख-भाल के साथ बेनी की सेवा का भी उसे कम ध्यान न रहता।

घर में बेनी के लाड़-दुलार और आदर का रहस्य गुरो को उसकी सास और ननद ने बता दिया था। गुरो के ससुराल आने से लगभग बारह-तेरह मास पूर्व गुरो की ददिया सास, लाला जी की मां का स्वर्गवास हो गया था। उस समय तक गुरो के ससुर लाला जी पवित्रता का ध्यान रखने वाले हिन्दुओं की तरह घर के आंगन में कुत्तों के आने से घृणा करते थे। यदि मुहल्ले का कोई कुत्ता या कुतिया ड्योढ़ी खुली रहने पर आंगन में आ जाता तो उसे 'हट्, धत्त' दुत्कार कर और लाठी दिखाकर आंगन से बाहर खदेड़ दिया जाता था किन्तु बेनी की बात दूसरी थी। वह तो मानो अपने ही घर में थी।

लाला गंडामल अपनी वृद्धा मां का बहुत आदर करते थे। उनके पिता छित्तरमल भी अपनी पत्नी को बहुत मानते थे। उनका विश्वास था कि उनकी सब समृद्धि पत्नी के भाग्य से ही हुई थी। उनका रोजगार विवाह के बाद ही चमका था। उससे पहले उनके घर की आर्थिक अवस्था अच्छी नहीं थी। विवाह से पूर्व वे और उनके पिता दिल्लू खत्री बजाजी की गठरी पीठ पर लादे गांव-गांव की फेरी करते फिरते थे। लक्ष्मी बहू के चरण घर में पड़ने से ही उनका भाग्य चमक उठा था।

जिस दिन लाला गंडामल के सिर पर से माता के वात्सल्य और कृपा का छत्र हटा, वे शोक से अधीर हो गये। माता के चरणों में सिर रख कर बहुत देर तक रोते रहे किन्तु मिट्टी हो चुके निर्जीव शरीर को दाह के लिये श्मशान ले जाना अनिवार्य था।

लाला जी और उनके दोनों पुत्र गली-मुहल्ले के लोगों के साथ माता की अर्थी लेकर श्मशान गये हुये थे। घर की स्त्रियां भीतर आंगन में गोल बांध कर स्वर्गीया माता की स्मृति में 'वैन' बोल-बोल कर आलाप से विलाप कर रही थीं। ड्योढ़ी की ओर किसी का ध्यान नहीं था। माता की अर्थी जाने के बाद ड्योढ़ी के किवाड़ खुले रह गये थे। उसी समय एक कुतिया प्रसव-पीड़ा की व्याकुलता में स्थान ढूंढ़ती हुई ड्योढ़ी के कोने में आकर बैठ गयी थी। घर में शोक और अव्यवस्था फैली हुई थी। उस कुतिया की ओर किसी का ध्यान नहीं गया था।

लाला गंडामल माता का अन्तिम सत्कार करके शोक में गर्दन झुकाये, श्मशान से बिरादरी और मुहल्ले के लोगों के साथ संध्या समय मकान पर लौटे तो उन्होंने रीति के अनुसार ड्योढ़ी के बाहर ही खड़े होकर, माता की अर्थी के साथ जाने वाले लोगों को धन्यवाद देकर विदाई दी। लाला जी का ध्यान ड्योढ़ी में प्रवेश करते ही, एक कोने में फटे-पुराने टाट पर बैठी हुई एक कुतिया की ओर गया। उनका हृदय शोक से भारी और कण्ठ रुंधा हुआ था। ड्योढ़ी में अनाधिकार आ बैठने वाली कुतिया को दुत्कार कर खदेड़ने के लिये शब्द मुख से निकल न सका।

कुतिया ने लाला जी की दृष्टि अपनी ओर देखकर करुणा की मूक पुकार में आंखें उनकी ओर उठा दीं और अपनी असहाय अवस्था प्रकट करने के लिये, पैर उठाकर नवजात सन्तान दिखा दी।

लाला जी तत्काल श्मशान से लौटे थे। उनके मन में संसार की अस्थिरता और दया-धर्म का विचार प्रबल था। वे सद्यः-प्रसूता कुतिया की करुण याचना के प्रति निष्ठुर न हो सके। उन्हें दया आ गयी। कुतिया को ड्योढ़ी से निकाल देने के बजाय कटोरे में दूध मंगवाकर कुतिया के आगे रखवा दिया। अवसर की बात, कुतिया ने केवल एक ही बच्चा दिया था और वह पिल्ली थी।

श्मशान से लौट कर लाला जी सूतक के विचार से पलंग पर नहीं बैठ सकते थे, इसलिये एक कमरे का फर्श धुलवाकर चटाई बिछाकर लेट गये। वे संसार की अस्थिरता, जन्म-मरण और पुनर्जन्म की बात सोचने लगे। जन्म-जन्म में उन्हें वही मां मिले। सहसा विचार आया, मां चौरासी लाख जोनियों में से जाने किस जोनि में शरीर धारण करे। उसी समय मस्तिष्क में कौंध गया—वे अपनी माता का एक शरीर श्मशान में छोड़कर आये हैं और संभव है

उनकी माता ने दूसरे शरीर से उनकी ड्योढ़ी में फिर प्रवेश कर लिया हो ! एक जीव ने उनकी ड्योढ़ी में आकर जन्म ले लिया था और अवसर की बात कि कुतिया के तीन, चार, पांच बच्चे नहीं, केवल एक ही पिल्ली हुई थी। यह विचार आते ही लाला जी चटाई से उठ खड़े हुये। पत्नी के समीप जाकर अपना अनुमान बताया—मनुष्य चौरासी लाख जोनि में भ्रमण करता है—परमेश्वर की इच्छा से जो शरीर मिल जाये ! मां ने यही शरीर धारण किया हो !

ड्योढ़ी में प्रसूता कुतिया और उसकी पिल्ली के प्रति उनकी करुणा और आदर उमड़ आया। जाड़े का मौसम था। लाला जी ने एक पुराना कम्बल दोहरा करके कुतिया को ओढ़ा दिया। कुतिया को प्रातः-संध्या दूध में रोटी चूर कर दिलवाने लगे और एक बर्तन में उसके सामने स्वच्छ जल रखवा देते।

लाला जी की ड्योढ़ी में प्रसूता कुतिया दोनों समय यथेष्ट दूध-रोटी पाकर भी अपनी प्रकृति से लाचार गलियों में घूमने के लिये निकल जाती। यह लाला जी को अच्छा नहीं लगता था। वे पिल्ली की आंखें खुल जाने और पिल्ली के स्वयं जीभ लपलपा कर दूध पी सकने की प्रतीक्षा करते रहे। पिल्ली दौड़ने-भागने लायक हो गयी तो लाला जी ने उसकी मां की आवारा आदतों के कारण उसका ड्योढ़ी के भीतर आना बन्द कर दिया और पिल्ली बेनी को आंगन के भीतर बांध लिया। बेनी के प्रति उनका आदर और ममता बढ़ती ही गयी। उसे गर्मी में नित्य ठंडे जल से और जाड़े में गुनगुने जल से स्नान कराया जाता था। उसके लिये अलग तौलिया था। प्रातः-संध्या दूध-रोटी का भोजन दिया जाता और स्वच्छ जल का बर्तन उसके सामने रखा रहता था। घर में जो भी पकवान बनता, उसका कुछ अंश सबसे पहले बेनो के सामने रखा जाता, बेनी खाये या न खाये। मौसम का नया फल आने पर भी लाला जी या उनकी पत्नी फल का कुछ अंश बेनी के सामने अवश्य रख देते। बेनो भी जन्म से सिखाये जाने के कारण निरामिष भोजन से ही संतुष्ट रहना सीख गयी थी। उसके सामने संतरा, सेव, केला, गाजर, हरे मटर जो कुछ भी रख दिया जाता, थोड़ा बहुत खा लेती थी। बेनी का सभी प्रकार आदर और दुलार था, केवल एक नियंत्रण उस पर था। लाला जी के सम्मानित घर की स्त्रियों की तरह उसे भी ड्योढ़ी से बाहर नहीं जाने दिया जाता था। आखिर तो कुतिया ही थी—गंद-बला में मुंह डालती या मैले-कुचैले कुत्तों के साथ खेलने लगती।

गुरो की सास ने गुरो को भी बेनी का इतिहास और महत्व बता दिया

था—मनुख अपने जनम-जनम के कर्मों से चौरासी लाख जोनि में भरमता है। जनम-जनम के कर्मों का फल पाता है। परमात्मा की इच्छा से जीव को जो शरीर मिल जाय ! गुरो बेनी के प्रति दिया सास के आदर का भाव रखती थी। घर की भैंसों के लिये सानी करने, उन्हें नहलाने, पोखर पर ले जाने का काम घर का नौकर रुल्दू करता था परन्तु बेनी को नहलाने और उसे दूध-रोटी देने का काम गुरो आदर और प्रेम से स्वयं ही करती थी। बेनी को दूध-रोटी देने से पहले दोनों समय उसके पीतल के कटोरे को अपने हाथ से मांज देती। बेनी के सामने रखे जल के बर्तन में यदि कौवा चोंच डाल जाता या आंगन के बाहर से शीशम या नीम के सूखे पत्ते हवा से उड़कर आ पड़ते तो पानी फेंक कर बर्तन को धोकर ताजा पानी भर देती।

गुरो को ससुराल आये छः मास बीत चुके थे। उसने बेनी के प्रति एक दिन भी उपेक्षा या अवज्ञा नहीं की थी। बेनी के भौंकते ही गुरो उसके समीप जाकर उसकी आवश्यकता की ओर ध्यान देती थी।

कार्तिक का महीना लग गया था। घर में दीवाली की तैयारियां हो रही थीं। गुरो घर के काम-काज में सास के साथ व्यस्त थी। उस दिन गुरो को समझ नहीं आ रहा था कि बेनी सुबह से क्यों बहुत भौंक रही थी। बार-बार ड्योढ़ी की ओर भागने के लिये जंजीर खींचती थी। गुरो बेनी को भौंकते सुनती तो आंगन में आकर उसे पुचकार जाती। तीसरे पहर गुरो पकवान के लिये घी का मोवन डालकर मैदा गूंध रही थी। उसे फिर बेनी के भौंकने की आवाज़ आयी। सुबह से वह कई बार बेनी को देख आयी थी इसलिये जल्दी नहीं उठी परन्तु जब भौंकने में बहुत तेज़ी जान पड़ी तो मैदे से सने हाथों से ही देखने गयी।

मुहल्ले का सबसे ज़बर्दस्त कुत्ता डब्बू लाला जी की ड्योढ़ी के सामने से जा रहा था। उसे भीतर आंगन में भौंकती बेनी का स्वर सुनाई दिया। बेनी की पुकार का भाव समझ कर डब्बू के कदम ठिठक गये, कनौतियां खड़ी हो गयीं और पूंछ गोल हो गयी। डब्बू ने नाक उठाकर सूंघा और पौरुष के कर्तव्य के गर्व से साहस कर लाला जी की ड्योढ़ी के अधमुंदे किवाड़ ठेल कर आंगन में चला गया।

गुरो ने देखा एक बड़ा सा कुत्ता ड्योढ़ी का मुंदा हुआ दरवाज़ा ठेल कर भीतर आ गया था और निधड़क पूंछ को गोल किये और सीने के पुट्ठे फुलाये

बेनी की ओर बढ़ रहा था। बेनी कुत्ते की ओर लपकने के लिये भौंक-भौंक कर जंजीर को पूरी शक्ति से खींच रही थी और कुत्ता गर्दन के रोयें फुला कर गुर्राता हुआ बेनी की ओर बढ़ रहा था।

"हाय!" गुरो इतने बड़े कुत्ते को देख कर डर गयी। उल्टे पांव रसोई की ओर लौटी। ईंधन में से सबसे बड़ी लकड़ी कुत्ते को मारने के लिये उठा ली और बेनी की रक्षा के लिये दौड़ी।

गुरो जब तक बेनी के समीप पहुंचे, आगन्तुक कुत्ते के प्रति बेनी का भाव बदल गया था। दोनों नाक से नाक मिलाकर एक दूसरे को सूंघ रहे थे। बेनी की पूंछ भी गोल होकर हिल रही थी। बेनी आगन्तुक कुत्ते के प्रति आत्मीयता प्रकट कर रही थी और वह अपनी अगली टांग बेनी पर रख रहा था।

गुरो के हाथ में कुत्ते को मारने के लिये उठी हुई लकड़ी नीची हो गयी। उसने लजाकर बेनी की ओर से मुंह फेरकर घूंघट खींच लिया। वह रसोई की ओर लौट चली।

"सुन री!"

गुरो ने घूम कर ड्योढ़ी की ओर देखा।

पड़ोसी बुद्धू की बहू रामप्यारी चली आ रही थी।

रामप्यारी ने गुरो को घूंघट काढ़े देखकर स्वर दबाकर पूछ लिया—"क्यों, क्या लाला जी घर में है?" रामप्यारी को तीसरे पहर घर में मर्दों के होने की आशा नहीं थी।

गुरो ने मैदे में सने हुये हाथ के अंगूठे और तर्जनी से अपने घूंघट को और अधिक खींच लिया। लाज भरी मुस्कराहट से पीठ पीछे बेनी के कोने की ओर संकेत करके फुसफुसाहट से उत्तर दिया—"बड़े लाला जी आये हैं।"

रामप्यारी की भवें विस्मय से उठ गयीं। उसने तर्जनी होठों पर रख कर कहा—"क्या कहती है री?"

गुरो ने आंचल का पर्दा किये सरल मुस्कान से कहा—"बहना जानती हो, मनुख मर कर उसका जीव चौरासी लाख जोनि में भटकता है! भगवान जो शरीर दे दें!"

रामप्यारी ने किलकारी से कहकहा लगाने के लिये गहरा सांस लिया और गुरो की सास को सम्बोधन कर चिल्ला उठी—"सुनो, सुनो, अपनी बहू की बात.....!"

गुरो की सास ने सुना तो झल्ला उठी—"फिटेमुंह (मुख पर लानत) ! मरी को जरा भी अक्ल नहीं है ।"

गुरो ने भोली आंखें सास की ओर उठाकर कहा—"मां जी, आपने ही तो कहा था, चौरासी लाख जोनि·····।"

गुरो की सास ने क्रोध में डांट दिया—"दुरफिटेमुंह ! गधी·····" सास क्रोध में बड़ी देर तक बड़बड़ाती रही ।

पड़ोसिनों ने सुना तो हंसी को वश में करने के लिये मुंह में आंचल भर कर पेट दबा लेना पड़ा और बोलीं—"हाय सचमुच, बेचारी बहुत सीधी है··· ··।"

●

खुदा और खुदा को लड़ाई

घुप्प अंधेरा, करफ्यू की रात का सन्नाटा !

'गंगू को गली' के दोनों ओर के दुमंजिले-तिमंजिले मकानों की किसी भी खिड़की या दरवाजे की सांधों से कहीं प्रकाश नहीं छन रहा था। मकानों में मनुष्यों के होने का कोई संकेत नहीं था। बाजार से गली में आने वाले बिजली के तार और कमेटी के लैम्प चार दिन पहले ही बाजार में आग लग जाने से बेकाम हो गये थे। उजड़े हुये मकानों के त्रास से गली का अंधेरा अधिक घना और भारी हो रहा था। गली के बाहर दायें-बायें 'सैदमिट्ठा' बाजार में भी सन्नाटा था। उजड़े हुये बाज़ारों में शेष रह गये बिजली के लैम्पों का प्रकाश सूनेपन की उदासी को और बढ़ा रहा था।

गुलजार और गुंजान लाहौर नगर देश के बंटवारे के परस्पर संहार के त्रास से भयभीत और सुन्न हो गया था। साम्प्रदायिक घृणा से परस्पर संहार और ध्वंस का उन्माद फैल गया था। उस संहार को रोकने के लिये सरकार ने करफ्यू लगा दिया था। करफ्यू के भय से रात का सन्नाटा और भी बोझिल और गाढ़ा हो गया था। नगर में भरे भय और सन्नाटे पर अगस्त मास के बादलों ने ऐसा ढक्कन चढ़ा दिया था कि हवा भी हिल नहीं सकती थी।

गंगू की गली के सब हिन्दू परिवार १३ अगस्त की सुबह तक भाग गये थे; रह गई थी केवल मूलां (मूलदेई) ताई। बाजार की ओर गली के मुहाने पर छोटी दुकानों में बैठने वाले—मुसलमान नियामत दर्जी, रशीद कलईगर, नज्जू पटुआ और लतीफ नेचे वाला अगस्त के आरम्भ से ही भय के मारे वहां नहीं आ रहे थे। केवल नुक्कड़ की दूकान वाला ललारी (रंगरेज) फज्जे और उसका बेटा नसरू ही लाचारी में वहां रह गये थे। दुकान की चार हाथ लम्बी और छः हाथ चौड़ी कोठरी में ही उनका घर भी था।

फज्जे की नीची और छोटी कोठरी या दुकान की छत की धन्नियों में बहुत सी अलगनें बंधी हुई थीं। अलगनें अब सूनी थीं। अच्छे दिनों में फज्जे और नसरू दिन भर में जो भी पगड़ियां, साड़ियां या चुन्नियां रंग कर, कलफ और अबरक लगाकर तैयार करते, अलगनियों पर लटका देते थे। कोठरी में एक बिना किवाड़ों की अलमारी थी। उसमें रंगों की पुड़ियां, डिब्बियां और सकोरे रखे हुये थे। एक कोने में बाप-बेटे की सम्पत्ति—अलमोनियम का टोंटीदार लोटा, देगची और एक तश्तरी-कटोरी के अतिरिक्त पहनने के दो-चार कपड़े चटाई पर पड़े रहते थे। कपड़ा रंगने की मिट्टी की तीनों नांदें और कलफ पकाने की हांडी वे लोग रात में कोठरी की दहलीज पर लगे बैठक के तख्ते के नीचे रख देते थे। पानी का मटका गली में दीवार के साथ रखा रहता था। फज्जे और नसरू को कोठरी में सोने की आवश्यकता केवल लाहौर के कड़े जाड़े और बरसात की रातों में ही होती थी, वरना फज्जे रात दुकान के पटरे पर काट देता था और नसरू गली में आने-जाने वालों के लिये रास्ता छोड़ कर चटाई डाल कर लेट जाता था। वहीं से वह कभी-कभी पहर रात तक 'हीर' या 'टप्पे' गाता रहता था।

नसरू और रमेश में 'हीर' और 'टप्पों' की प्रतिद्वन्द्विता खूब जमती थी। रमेश का परिवार फज्जे की दूकान से तीसरे मकान में, ऊपर की मंजिल में रहता था। रमेश मकान की खिड़की में बैठकर, दोनों कानों पर हाथ रखकर पूरे स्वर से गाता और नसरू गली में चटाई पर बैठा ऊंचे स्वर में गाने के लिये कान पर हाथ रख, रमेश की खिड़की की ओर मुंह उठाकर उसका उत्तर देता। कभी दोनों रमेश के मकान के चबूतरे पर बैठकर साथ-साथ भी गाते।

जुलाई १९४७ के अन्त तक 'सैदमिट्ठा' में हिन्दुओं का जोर था। बाजार में तीन-चार मुसलमान मारे जा चुके थे। अब मुसलमान उस बाज़ार से नहीं गुजरते थे इसलिये गंगू की गली में मुसलमानों की छोटी-छोटी दुकानें बन्द हो गई थीं। गंगू की गली में दूसरे मुसलमानों की दुकानें बन्द हो जाने पर भी फज्जे और नसरू वहीं बने थे। फज्जे अपना भय छिपाये, सबके सांई-अल्लाह का भरोसा किये बैठा था। उसे गली से अपने चालीस बरस के सम्पर्क का भी भरोसा था। मुद्दतों से गली के सब बच्चे-बच्चियां और युवा-युवतियां उसे मामा कहते आये थे। बहू-बेटियां सिर पर आंचल लिये बिना भी उसे रंगने के लिये चुन्नियां, साड़ियां और पगड़ियां थमा जाती थीं। रंग मन माफिक

न होने या कलफ और अबरक कम होने पर उससे लड़ भी लेती थीं। लड़के फटी पतंग जोड़ने के लिये उसकी कलफ की हांडी से उंगलियां भर-भर के कलफ लेकर भाग जाते थे।

फज्जे जोर से चिल्लाता—नसरू, पकड़ ले चोरों को। इनका वेड़ा····· और समीप खड़ा गली में खूब ऊंची बंधी रस्सियों पर कपड़े डालने के लिये काम आने वाला दस हाथ लम्बा पतला बांस उठाने लगता। तब तक बच्चे कुलांचे मार कर अपने घरों की छतों पर पहुंच जाते थे। गली के सभी लोगों, बूढ़ियों, बहुओं और बेटियों तक के नाम उसे मालूम थे। वह कहां जाता ? अन्यत्र उसका कौन अपना था !

गंगू की गली में मुसलमानों की दुकानें बन्द हो जाना हिन्दुओं ने अपनी विजय समझी थी और कुछ हिन्दुओं को फज्जे और नसरू का अपनी कोठरी से भाग न जाना चुनौती जान पड़ी थी। अब उन्हें रंगने के लिये कपड़े कोई न देता था। कर्मचन्द ने उभरती रेखों के रोयें मरोड़ कर फज्जे को धमका भी दिया था—"क्यों मियां, क्या सलाह है ?"

फज्जे ने हाथ जोड़ कर उत्तर दिया था—"बादशाहो, मालिको, तुम्हारी जो सलाह हो, हुकुम हो। चालीस बरस से इस गली का नमक खा रहे हैं, कोई दूसरी जगह अपनी है नहीं। तुम धक्का दे दोगे तो निकल जायेंगे। हमें तो जाने को कोई जगह है नहीं ! बादशाहो, ऐसी आंधियां तो आती-जाती रहती हैं। सिर गरम करने से क्या फायदा ?"

हरचरण पंसारी ने बीच-बचाव कर दिया था—"रहने दो ! रहने दो ! क्या लेते हैं किसी का ? कल गली की बेटियों-बहुओं को धोतियां-चुन्नियां रंगाने की जरूरत होगी तो कौन आयेगा ?" परन्तु कर्मचन्द का सात वर्ष का छोटा भाई धर्मचन्द और रमेश का छोटा भाई राजेश अपनी साम्प्रदायिक उत्तेजना वश नहीं कर सके। उन्होंने लट्टू मार-मार कर फज्जे का गली में रखा मटका तोड़ ही डाला। गली में ऐसी घटना पन्द्रह दिन पूर्व हुई होती तो बालकों पर डांट-फटकार पड़ती। उस समय बालकों को किसी ने कुछ नहीं कहा।

नसरू का खून इतना सर्द नहीं था। मटका तोड़ दिये जाने पर उसका खून उबल उठा। वह काफिर हिन्दुओं से अपमान नहीं सहन कर सकता था। शहर के दूसरे मुसलमान जो कुछ कर रहे थे, नसरू भी करना चाहता था। वह भी पाकिस्तान की स्थापना के धर्मयुद्ध में भाग लेने की उमंग हृदय में

दबाये हुये था परन्तु डरपोक बाप की ज़िद्द से मज़बूर था। बूढ़े बाप को हिन्दुओं के गढ़ में अकेला छोड़ कर कैसे चला जाता ? नसरू कुछ दिन पहले से ही बाप से गली छोड़ जाने का आग्रह कर रहा था। कर्मचन्द के धमकाने और मटका तोड़ दिये जाने पर नसरू ने क्रोध में दांत पीसकर बाप से कहा—"इन काफिरों की मां को सुअर·····अब यहां गुजारा नहीं। दूसरी जगह कोठरी नहीं मिलेगी तो किसी मसजिद या दरगाह में ही पड़े रहेंगे।"

फज्जे ने बेटे को दबे स्वर में डांट दिया—"चुप रह, सूर देया तुख्मा, (सूअर के बीज) बड़ा दुर्रेखां बनता है ! ऐसी नोंक-झोंक हुआ ही करती है। बेवकूफों की बातें·····यह दुकान मेरे बाप ने जमाई थी। तू इसी कोठरी में पैदा हुआ था। इसी गली की औरतों ने तेरी मां को संभाला था। इसी कोठरी में वह मरी। इसी गली का नमक खाकर तेरे हाथ-पांव लगे हैं। चुप बैठा रह, सब ठीक हो जायेगा।"

फज्जे ने हिन्दुओं से पाये अपमान निगल कर उल्टे नसरू को ही डांट दिया तो नौजवान बेटे की आंखों में पानी आ गया। वह आंसुओं का घूंट भर कर बोल उठा—"तुम मुसलमान नहीं हो।"

फज्जे को और भी क्रोध आ गया—"तेरी मां नूं सूर·····(तेरी मां को सूअर·····) तू बड़ा मुसलमान है ! तू ही बड़ा दीनदार गाज़ी है ! तेरा दादा मुसलमान नहीं था ? तू किस मुसलमान का तुख्म है ? तू नया मुसलमान बनेगा ? चुप रह !"

× × ×

अगस्त १९४७ के दूसरे सप्ताह से सैदमिट्ठा बाजार में स्थिति बदल गई थी। दो बार मुसलमानों की भीड़ का आक्रमण हो चुका था। हिन्दुओं के बहुत से मकान और दूकानें जला दी गई थीं। दुकानें प्रायः बन्द ही रहती थीं। गंगू की गली में सभी घर हिन्दुओं के थे। लाहौर से हज़ारों हिन्दू परिवार भाग चुके थे। यह समाचार पाकर भी गंगू की गली के हिन्दुओं ने डटे रहने का निश्चय प्रकट किया—हमें औरंगजेब और नादिर खाँ नहीं डरा सके, जिन्ना और मुस्लिम लीग की क्या औकात है ? हम न अपना धर्म छोड़ेंगे और न अपना घर छोड़ेंगे परन्तु सैदमिट्ठा में आग, कत्ल और लूट की अनेक घटनायें

हो जाने पर कई परिवार खिसक गये और फिर सभी जल्दी से जल्दी भाग जाने के लिये उतावले हो गये। रह गई केवल मूलां ताई।

मूलां ताई छब्बीस बरस पहिले विधवा हो चुकी थी। भगवान ने उसे तीन कन्यायें दी थीं। मूलां के पति पैतृक सम्पत्ति का बंटवारा करके अपने भाइयों से अलग हो चुके थे। मूलां ताई की भी अपने जेठ-देवरों से नहीं बनती थी। उसे सदा ही सम्बन्धियों से ठगे जाने की आशंका बनी रहती थी। उसने गंगू की गली में अपने बड़े मकान में दो किरायेदार रख लिये थे। सोने का जेवर वेच दिया था और गुप-चुप दूसरों का जेवर रेहन रखकर रुपया सूद पर चलाती रहती थी। सबसे छोटी लड़की का विवाह हुये भी चौदह वर्ष हो गये थे। तब से उसने मकान में एक और किरायेदार बसा लिया था। अपने किरायेदारों से उसका सम्बन्ध किराया लेने मात्र का था। किराया मिलने में चार दिन का भी विलम्ब होने से उसका बोल कड़ुवा हो जाता था। उसे पड़ोसियों से भी कोई मतलब न था। उसका दिन ठाकुर जी की पूजा और जप-पाठ में ही बीतता था।

गली के हिन्दू परिवार भागने लगे तो मूलां ताई को अपने मकान और गुप्त सम्पत्ति का लोभ जकड़े रहा। उसका किसी से सौजन्य नहीं था। वह संसार में 'ठाकुर जी' के अतिरिक्त किसी को अपना नहीं समझती थी। उसे सब पर सन्देह था। पड़ोसी उसका सिड़ीपन देखकर विस्मय प्रकट करते थे, बुढ़िया रुपये का क्या करेगी? शायद कोई मन्दिर-धर्मशाला बनवा कर नाम कर जाना चाहती है। उस विकट संकट के समय किसी ने सहानुभूति से बुढ़िया का बोझ अपने कन्धे पर ले लेने का निमंत्रण नहीं दिया। सूनी गली में मूलां अपने उजड़े मकान में, ठाकुर जी के भरोसे अकेले रह गयी थी और नीचे गली के नुक्कड़ की कोठरी में रह गया था फज्जे लंगारी अपने बेटे नसरू के साथ।

× × ×

साम्प्रदायिक उपद्रव आरम्भ होने से पहले फज्जे का गंगू की गली के सभी परिवारों से कुछ न कुछ सम्पर्क रहता ही था। मूलां ताई की छोटी लड़की का विवाह हो जाने के बाद से मूलां ताई का फज्जे से वास्ता केवल मास के आरम्भ में पिछले मास का किराया मांगने का ही रह गया था। फज्जे दो-तीन

बार तकाजे के बिना किराया नहीं चुकाता था। मूलां ताई को उसे किराये के लिये चेतावनी देनी होती तो ठाकुर जी की पिटारी लेकर मकान के चबूतरे पर फज्जे के मकान की ओर मुंह करके बैठ जाती और ठाकुर जी को पूजा के लिये स्नान कराते-कराते किराया समय पर न मिलने के लिये खिन्नता प्रकट कर देती।

फज्जे गली के लोगों को अपना लता-पता और सामान लिये भागते देखता तो उसकी आह निकल जाती—"या अल्लाह, कैसी कयामत आ गयी ! सब लोग चले जायेंगे तो इस उजाड़ में गुजर कैसे होगी ! भूतों के इस डेरे में हम अकेले कैसे रहेंगे !"

नौजवान नसरू को भय से भागते काफिरों को देखकर उत्साह अनुभव हो रहा था। वह दांत पीस कर कहता—"जाने दो जहन्नुम में हरामी काफिरों को। पाकिस्तान में काफिरों का क्या काम !"

फज्जे जाने वाले परिवारों को गिनता जा रहा था, कौन लोग चले गये और कौन रह गये ? १३ अगस्त की सुबह ही साधूराम और जमुनादास के परिवार भी चले गये तो उसने बहुत उदासी से बेटे की ओर देखा—"बस, बूढ़ी मूलां ताई ही रह गयी।"

नसरू ने मुंह बिचका कर उपेक्षा से कह दिया—"वो डायन कहां जायेगी ! अपना सोना-चांदी गाड़े उस पर सांप बनी बैठी है। वह मां''''कहां जायेगी !"

उस दिन दोपहर के समय साम्प्रदायिक उत्तेजना से बावले आवारा मुसलमानों की भीड़ ने हीरामण्डी की ओर से सैदमिट्ठा बाजार पर हल्ला बोल दिया। हिन्दू अपनी दुकानों में भारी-भारी ताले लगा कर चले गये थे। भीड़ 'पाकिस्तान ज़िन्दाबाद ! अल्ला-हो-अकबर ! सल्तनते-इलाही जिन्दाबाद !' के नारे लगा रही थी। दुकानों के ताले तोड़कर माल लूट रही थी। लुटेरे बजाजी की दुकानों से रेशम, मखमल, मलमल के थान उठा-उठा कर भागने लगे। कोई पंसारी और परचून की दुकानों मे बादाम, किशमिश, छुहारे, आटा, सूजी, चीनी की बोरियां लेकर भाग रहे थे। किसी दुकान से पीतल-कांसे के बर्तन लूटे जा रहे थे। कुछ लोग सर्राफे की दुकानों पर पिल पड़े थे। हल्ला सुनकर फज्जे और नसरू भी गली के मुंह पर आ गये थे। नसरू के मुंह में पानी भर आया, बोला—"अब्बा, मैं भी एक-आध थान लट्ठा, मलमल या आटे-चीनी की बोरी उठा लाऊं ?"

फज्जे ने घृणा से डांट दिया, "चुप रह, सूर देआ तुरूमा।"

नसरू ने तर्क किया—"क्यों, सब ले जा रहे हैं। कहते है 'माले गनीमत' (धर्मयुद्ध का प्रसाद) है।"

फज्जे ने और क्रोध से डांटा—"सूर के····· ताले तोड़ कर, सेंध लगा कर चोरी-डाका डालना जिहाद (धर्मयुद्ध) है ! यह 'माले गनीमत' है या सूअर का गू !" फज्जे घृणा से एक ओर थूक कर लौट गया और अपनी दूकान के पटरे पर जा बैठा।

नसरू की धर्मोत्तेजना पिता की फटकार सुनकर भी शांत नहीं हुई। वह आगे बढ़ गया और भीड़ के साथ नारे लगाता हुआ 'लुहारी मंडी' की ओर चला गया। रास्ते में कत्ल किये हुये हिन्दुओं की तीन लाशें देख कर उसकी उत्तेजना और धर्मोत्साह अधिक बढ़ गया। धर्मयुद्ध में जूझ जाने के लिये बाहें फड़कने लगीं।

× × ×

लाहौर के बाजारों में लूट और ध्वंस इतना बढ़ गया था कि चौथे पहर व्यवस्था कायम रखने के लिये सशस्त्र सिपाहियों से भरी फौजी लारियां दौड़ी चली आयीं। बाज़ारों में राइफलों के फायर 'धांय-धांय' गूंजने लगे। जहां भीड़ दिखाई देती, सिपाही गोली चला देते। फज्जे अपनी दुकान के पटरे पर बैठा बाज़ार की ओर देख रहा था। गली के सामने एक आदमी पीतल की बड़ी परात लिये भाग रहा था। आदमी चीख कर गिर पड़ा, साथ ही बन्दूक चलने की धांय और परात बाजार में गिरने की झंकार से बाजार गूंज गया। फज्जे का कलेजा धक्क से रह गया—हाय नसरू !

बाजारों और गलियों में राइफल लिये सिपाही तैनात कर दिये गये थे। कर्फ्यू हो गया था। तीन आदमियों को भी एक साथ चल सकने का हुक्म नहीं रहा था। ऐलान हो गया—सांझ सात बजे, कमेटी की बिजली जल जाने के बाद जो भी शख्स बाज़ारों में निकलेगा, उसे गोली मार दी जायेगी।

कर्फ्यू का ऐलान हुआ तो नसरू गली में लौटा नहीं था। फज्जे का दिल मुंह को आ रहा था, आंखों में आंसू उमड़े आ रहे थे। नौजवान बेटे के अल्हड़-पन के प्रति क्रोध से उसके मुंह में बार-बार गालियां आ रही थीं—कमबख्त··· का दिमाग फिर गया है। इसे क्या हो गया ?

बिजली जलने से पहले ही नसरू लौट आया तो फज्जे की जान में जान आई। उसने लड़के को डांटा—"चल·····कोठरी में बैठ। खबरदार बाहर निकला। सिपाही की बन्दूक की गोली से पागल कुत्ते की मौत मर जायेगा तो सब गाज़ीपन·····से निकल जायेगा!"

नसरू ने बेपरवाही से कहा—"अरे, हो क्या गया? अब तो फौज भी अपनी है, सब मुसलमान भाई हैं। काफिर तो सब गये। लोगों ने तो पांच-पांच सेर सोना बटोर लिया है, बजाजी से घर भर लिये हैं।"

नसरू का मन अपने सम्प्रदाय की विजय से उमग रहा था। वह 'लुहारी मंडी' से एक छुरा भी लेता आया था। बूढ़ा बाप छुरा देख कर डर न जाय इसलिये छुरे को तहमद में खोंसे था।

फज्जे और नसरू सात बजे कर्फ्यू का बिगुल सुनकर अपनी कोठरी में हो गये थे। फज्जे का मन रोटी सेंकने को न हुआ। नसरू ने भी परवाह न की। कोठरी में बिछी चटाई पर दोनों पास-पास पड़े थे। गली में अंधेरा घना हो गया था और कोठरी में उससे भी अधिक। वायु बिलकुल निश्चल और सुन्न थी। आकाश में घने परन्तु खुश्क बादल छा गये थे। घने बादलों का ढक्कन धूप में तपे शहर के पक्के मकानों से उठती गर्मी और उमस को शहर पर दबाये था। पूरा शहर स्तब्ध था। हवा भी सांस रोके थी।

कोठरी में लेटे फज्जे और नसरू के शरीर से पसीना तेल की तरह निकल रहा था। फज्जे ने कुर्ता-तहमद उतार कर केवल लंगोट पहन लिया था। नसरू के शरीर पर भी कुर्ता नहीं था। टांगों को चिप-चिप से बचाने के लिये तहमद कमर पर समेटे था। कर्फ्यू और उमस भरी गर्मी के आतंक से दोनों ही चुप और खिन्न थे। कोठरी में खजूर की उधड़ी हुई एक पंखी थी। फज्जे पंखी से अपने और नसरू के शरीर को हवा कर रहा था। बांह थक जाती तो पंखी को नसरू के सीने पर फेंक देता। नसरू पंखी से अपने और पिता के शरीर पर हवा करने लगता। दोनों चुपचाप एक दूसरे से खिन्न, परिस्थिति से खिन्न बारी-बारी से पंखी चलाये जा रहे थे। नींद ही उन्हें आराम दे सकती थी। नींद गर्मी के कारण आ नहीं रही थी। नींद न आने से घबराहट बढ़ती जा रही थी। भय भरे सन्नाटे में बाजार के फर्श पर कर्फ्यू के पहरेदार सशस्त्र सिपाहियों के फौजी बूटों की आहट उन के भय और बेबसी को और भी कड़ुवा बनाये दे रही थी।

रात का एक पहर वीत गया था। नींद न फज्जे को आ सकी, न नसरू को। नसरू पसीने से भीगी खजूर की चटाई पर बार-बार पीठ चिपक जाने से चिढ़ गया। उसने पंखी बाप को दे दी और चटाई से उठकर हवा के लिये कोठरी की दहलीज पर उकड़ूं बैठ गया।

नसरू गली में कदमों की धीमी चाप सुनकर चौंका। उसकी आंखें आहट की ओर घूम गयीं। देखा, सूनी गली के अंधेरे में मूलां ताई अपनी धोती-चादर में सिमटी हुई, दवे पांव बाज़ार की ओर जा रही थी। नसरू ने पिता की ओर देखा; दवे स्वर में बोला—"देख, बूढ़ी मूलां छिपकर भाग रही है।"

फज्जे ने पंखी से हवा लेते हुये लेटे-लेटे ही कह दिया—"होगा·····अकेली डर गयी होगी। अल्लाह ही बचाने वाला है।"

नसरू ने गली से बाज़ार में कदम रखती बुढ़िया की ओर ध्यान से देखा—"काफिर गठरी में अपनी रकम दबाये लिये जा रही है·····" उसके मुंह से निकला और उत्तेजना से उसके रोयें खड़े हो गये।

"होगा, उसे अल्ला रखे, तुझे क्या ?" फज्जे ने करुणा से कह दिया।

नसरू पिता की बात पूरी होने से पहिले ही दहलीज से कूद कर बुढ़िया के पीछे बाज़ार की ओर भाग गया था।

फज्जे बेटे को प्राण संकट में डालने के लिये बाज़ार की ओर भागते देख कर घबरा गया और बेबस क्षोभ में—'तेरी मां नूं सूर····' गाली देते हुये बेटे को रोकने के लिये उसके पीछे भागा।

बूढ़ा फज्जे शिथिल कदमों से डगमगाता बाजार तक पहुंचा तो नसरू ने बाज़ार में चालीस कदम दूर बिजली के खम्भे के समीप मूलां ताई की पसली में छुरा भोंक दिया था और उसकी गठरी छीनकर दौड़ा आ रहा था।

क्रोध से कांपता हुआ फज्जे बेटे को ढकेल कर कोठरी में ले गया।

नसरू ने सफलता के उल्लास से कहा—"·····काफिर बुढ़िया सब कुछ लिये भागी जा रही थी।" वह जल्दी-जल्दी गठरी खोलने लगा।

फज्जे दम फूल जाने के कारण सिर को दोनों हाथों से पकड़ कर बैठ गया था। उसकी सांस तेज चल रही थी। मुंह से बोल नहीं निकल रहा था। न हाथों में शक्ति थी कि बेटे को बुढ़िया का कत्ल करके छीनी हुई गठरी खोलने से रोक सकता और गठरी उठाकर फेंक देता।

नसरू ने गठरी खोल डाली और गठरी में बंधी पिटारी का ढक्कन झटके

से उठा लिया—"मां .....काफिर बुढ़िया भागी तो पिटारी में अपने पत्थर के खुदा को लिये जा रही थी।" वह विद्रूप में हंस पड़ा।

फज्जे की आंखें अंधेरे में भी क्रोध से लाल दिख रही थीं। उसने बेटे को सुरक्षित देख कर क्रोध और ग्लानि से लानत दी—"ओऐ, तेरी मां नूं सूर..... वेड़ा गरक होये तेरा, मासूम बूढ़ी का खून कर दिया। काफिर अपने पत्थर के खुदा को लिये भागी जा रही थी। अपने पत्थर के खुदा से तेरे खुदा का सिर फोड़ देती। तू बड़ा गाजी है, तूने अपने खुदा को बचा लिया।"

●

नारी की ना

पुराणों में कथा है—महर्षि विश्वामित्र राजर्षि-पद प्राप्त करने में सफल हो गये तो ब्रह्मर्षि-पद के लिये तप करने लगे।

ब्रह्मर्षि वशिष्ठ और देवताओं के गुरु बृहस्पति ने विश्वामित्र को ब्रह्मर्षि पद देना स्वीकार न किया। विश्वामित्र देवताओं और ब्राह्मणों की अहमन्यता, अन्याय और दुराग्रह से बहुत खिन्न और रुष्ट हो गये। उन्होंने देवताओं और ब्राह्मणों की व्यवस्था से असहयोग की घोषणा कर दी। अपने विचारों और मान्यताओं के अनुकूल नयी सृष्टि और व्यवस्था बना लेने का निश्चय कर लिया और उसके लिये तप आरम्भ कर दिया। महर्षि की नयी सृष्टि और व्यवस्था बनाने की योजना और तप की चर्चा पृथ्वी और देवलोक में फैल गयी।

देवराज इन्द्र को समाचार मिला कि महर्षि विश्वामित्र की नयी सृष्टि और व्यवस्था बना लेने की चुनौती खोखला दम्भ ही नहीं थी। राजर्षि ने अपने निश्चय को कार्यान्वित करना आरम्भ कर दिया था। उन्होंने कुछ ऐसे जीव और वृक्ष विकसित कर लिये थे जो ब्रह्मा की सृष्टि में नहीं थे। उदाहरणतः उन्होंने उपयोगिता की दृष्टि से देवताओं और ब्राह्मणों की प्रिय गाय की अपेक्षा अधिक दूध दे सकने वाला जीव भैंस उत्पन्न कर लिया था; देवताओं के प्रिय वाहन अश्व से अधिक उपयोगी, अधिक भार उठा सकने वाले और बहुत दूर जा सकने वाले जीव ऊंट का निर्माण कर लिया था। ब्रह्मा की सृष्टि में वनस्पति जल के सहारे उर्वरा भूमि में ही हो सकती थी; विश्वामित्र ने निर्जल मरुभूमि में उत्पन्न हो सकने वाले वृक्ष मदार का विकास कर लिया था।...

देवराज इन्द्र ने आशंका अनुभव की—यदि राजर्षि विश्वामित्र ब्रह्मा की सृष्टि और व्यवस्था की प्रतिद्वन्द्वी अपनी स्वतंत्र सृष्टि और व्यवस्था बना लेंगे तो देवताओं और ब्राह्मणों के सम्मान की रक्षा नहीं हो सकेगी। उन्होंने राजर्षि

के तप को भंग कर देना आवश्यक समझा ।

देवराज जानते थे, विश्वामित्र को कोई कठिनाई अथवा भय अपनी प्रतिज्ञा से शिथिल नहीं कर सकेगा। उपाय केवल एक था, विश्वामित्र का ध्यान अपनी योजना और तप से स्खलित हो जाये ।

देवराज इन्द्र ने महर्षि विश्वामित्र का तप स्खलित करने के लिये देवताओं की पुरातन परम्परा के अनुसार स्वर्गलोक की श्रेष्ठतम, नम्बर वन अप्सरा उर्वशी को भेजना चाहा परन्तु आशंका की कि दृढ़ निश्चयी ऋषि का तप भंग कर सकने में बहुत समय लग जायेगा। उत्पादन के श्रम से मुक्त, केवल आनन्द-विनोद में समय बिताने वाले देवताओं के लिये विनोद के साधनों के बिना बहुत दिन तक रहना कठिन होता है। देवराज इन्द्र ने स्थिति पर सोच-विचार कर विश्वामित्र का तप भंग करने के लिये देवलोक की स्टार नम्बर दो, मेनका को यह कार्य सौंप दिया ।

अप्सरा मेनका ने अपने आकर्षण और चातुर्य से विश्वामित्र का तप स्खलित करके ब्रह्मा और देवताओं की व्यवस्था और सम्मान की रक्षा की थी। पुराणों में यह कथा संक्षेप में है। मेनका को यह उत्तरदायित्व पूरा करने में जो कठिनाइयां अनुभव हुयीं, उनका ब्योरा पुराणों में नहीं है। मेनका ने स्वर्ग लौटकर वह अनुभव कामदेव को बताया था। 'गुह्य' कामशास्त्र के 'नारी चरित्र प्रकरणम्' में उसका वर्णन इस प्रकार है :—

स्वर्ग-लोक में अप्सराओं को नृत्य नाटक करने के लिये दिन और रात में अनेक बार वस्त्राभूषण बदलने होते हैं, प्रसाधन करना पड़ता है। वे दीर्घ काल तक अनवरत नृत्य करती रहती हैं परन्तु उससे अप्सराओं को कोई कठिनाई या थकावट नहीं होती। कारण यह कि स्वर्ग में सब काम इच्छा मात्र से हो जाते हैं। अप्सराओं के इच्छा करने पर उनके शरीर पर पहने वस्त्र-आभूषण हट जाते हैं और दूसरे वस्त्र-आभूषण उचित ढंग से उनके शरीर पर आ जाते हैं। अवसर अनुकूल प्रसाधन भी स्वयं हो जाता है। कितना ही नाचने या उछल-कूद करने पर भी उन्हें थकावट नहीं होती ।

मेनका विश्वामित्र जैसे कठोर, दृढ़ निश्चयी व्यक्ति को वश में करने के लिये पृथ्वी पर आयी थी। उसे अपने प्रयोजन के लिये बहुत से वस्त्र-आभूषण और प्रसाधन सामग्री साथ लानी पड़ी। साड़ियों को प्रेस करने, मेकअप में सहायता के लिपे सहायक की आवश्यकता थी। मर्त्यलोक के थकावट उत्पन्न

कर देने वाले वातावरण में दिन भर भारत नाट्यम्, मणिपुरी और कत्थक नृत्य करने के वाद थकावट दूर करने के लिये शरीर की मालिश कराने की या दववा सकने की सुविधा भी चाहिये थी।

स्वर्ग-लोक में अभाव की आशंका न होने के कारण पूंजी और सम्पत्ति बटोर कर रखने की और उत्तराधिकार की प्रथा नहीं है इसलिये वहां स्वामी और दास का सम्वन्ध भी नहीं हो सकता। मेनका जानती थी, मर्त्यलोक में स्वामी और दास की प्रथा है। मेनका ने पृथ्वी पर आकर दासी रख ली। दासी चुनते समय यह ध्यान रखा कि परिश्रम कर सकने योग्य युवती तो हो परन्तु रूपवती न हो।

मेनका ने राजर्षि विश्वामित्र के दृढ़ निश्चय और कठोर स्वभाव की ख्याति सुनी थी। वह जानती थी, ऋषि सरलता से वश में नहीं आयेंगे। मेनका ने ऋषि के आश्रम के समीप ही छोलदारी लगवाकर अपना डेरा डाल लिया। ऋषि के आश्रम की ओर चलते समय बदलने के लिये कई रंग की साड़ियां, पेशवाजें, कई प्रकार के घुंघरू, रिकार्डेड नृत्य संगीत, आभूषण तथा प्रसाधन-सामग्री दासी के हाथ में दे दी।

विश्वामित्र नई सृष्टि की योजना के तप में वहुत ही एकाग्र थे। अपनी कुटिया में द्वार के सामने मृग-चर्म पर पालथी मारे प्लान वनाने में मग्न थे। ऋषि दोपहर में लंच के लिये भी कुटिया से न निकले तो मेनका ने कुटिया के द्वार के सामने ही रिकार्ड प्लेयर पर नृत्य-संगीत लगाकर हाव-भावपूर्ण नृत्य आरम्भ कर दिया। संगीत-नृत्य की ताल और घुंघरुओं की झनकार सुनकर ऋषि ने आंख उठा कर देखा और एक शिष्य को आदेश दे दिया कि नाचने वाली को कुछ देकर विदा कर दिया जाये।

मेनका ने ऋषि पर एक नृत्य का कुछ प्रभाव न देखा तो दासी को बुला कर वस्त्राभूषण वदले और प्लेयर पर धुन वदल कर दूसरा नृत्य आरम्भ कर दिया। इसी प्रकार तीसरा, फिर चौथा। नाचने वाली कुटिया के द्वार के सामने से नहीं हटी। विश्वामित्र भी कार्य में व्यस्त रहे। वे नर्तकी के प्रति उपेक्षा प्रकट करने के लिये सामने न देखते। दृष्टि कभी दाहिने कर लेते, कभी बायें।

विश्वामित्र को जान पड़ा कि आश्रम के दाहिनी ओर बाड़ के साथ कोई नारी छिपी हुई थी। ऋषि ने उस ओर ध्यान से देखा तो नारी लोप हो गयी। कुछ समय वाद ऋषि को नारी की आकृति दूसरी झाड़ी के पीछे दिखाई दी

और ध्यान से देखने पर फिर लोप हो गयी ।

मेनका की दासी को अभिजात्य कुलों (एरिस्टोक्रेट सोसायटी) की सेवा का अनुभव था । उसने दासी के शील और व्यवहार की दीक्षा (ट्रेनिंग) पायी थी । वह स्वामिनी की शृंगार-सेवा करके स्वामिनी की दृष्टि से परे, दूर आश्रम की बाड़ के दाहिने हाथ जा बैठती थी कि स्वामिनी का संकेत पा सके। ऋषि दृष्टि अपने ऊपर पड़ने से वह सकुचाकर ओट में हो जाती थी ।

दूसरे दिन मेनका ने ऋषि का ध्यान आकर्षित कर सकने के लिये पहले दिन की अपेक्षा अधिक शृंगार किया और प्रातः से ही कुटिया के आंगन में अनेक प्रकार के नृत्य आरम्भ कर दिये ।

दासी पहले दिन आश्रम की बाड़ के दाहिने हाथ बैठने पर ऋषि की दृष्टि में पड़ गयी थी । दूसरे दिन उसने संकोच से आश्रम की बायीं ओर बैठना उचित समझा ।

विश्वामित्र ने आकर्षण का आक्रमण करने वाली नर्तकी की ओर न देखने का निश्चय कर लिया था । उनकी दृष्टि प्लान की फाइल के भोजपत्रों और ताड़-पत्रों पर से उठ जाती तो वे सामने न देखकर दायें या बायें देखने लगते। ऋषि को पहले दिन दिखाई पड़ने वाली नारी, दूसरे दिन आश्रम की बाड़ के बायीं ओर छिपी दिखायी दे गयी ।

विश्वामित्र नयी सृष्टि के प्लान के विचार में गहरे डूबे हुये थे परन्तु गूढ़ विचार से बहुत थके मस्तिष्क में, उनकी दृष्टि से संकोच करने वाली नारी के प्रति कौतूहल जागे बिना न रह सका । वे गर्दन घुमा-घुमा कर उसकी ओर देखने लगे । दासी से आंखें चार हो जाने पर उन्होंने उसे समीप आने का संकेत किया । दासी लज्जा और भय से सिमट कर और छिप गयी ।

विश्वामित्र, अपनी दृष्टि से भयभीत और संकुचित हो जाने वाली नारी के प्रति कौतूहल दमन न कर सके। नयी सृष्टि की योजना के लिये गूढ़ विचारों से थके मस्तिष्क को कुछ विश्राम की भी आवश्यकता थी । योजना की फाइल के भोज-पत्र हवा से बिखर न जायें, इसलिये उन्हें चिकने पत्थर के पेपर वेट से दबा दिया । वे मृग-चर्म से उठ गये । भय और संकोच से सिमट जाने वाली नारी के दर्शन की जिज्ञासा से बाड़ की ओर चले ।

दासी ने ऋषि को अपनी ओर आते देखा तो लज्जा और आतंक से झाड़ियों में आगे बढ़कर छिपने का यत्न किया । ऋषि उसका पीछा करने लगे

और वह उनके भय से आगे-आगे भागने लगी ।

मेनका ने ऋषि को अपनी उपेक्षा कर दासी के पीछे भागते देखा तो उसे ऋषि की हीन रुचि (बलगर टेस्ट) के प्रति बहुत विस्मय और विरक्ति हुई । सोचा, यह अरसिक वनवासी कला की सूक्ष्मताओं से अपरिचित है । कला के सूक्ष्म संवेदनों को अनुभव नहीं कर सकता । इनके लिये तो यह नृत्य व्यर्थ धरती कूटना ही है । वह खिन्न होकर अपने डेरे पर लौट गयी ।

दासी विश्वामित्र के आतंक से घनी झाड़ियों में छिप गयी थी । सूर्यास्त तक वहीं छिपी रही । अन्धकार हो जाने पर ऋषि की दृष्टि से बचती-छिपती डेरे में स्वामिनी की सेवा में पहुंची ।

मेनका ने दासी के प्रति ऋषि का दो दिन का व्यवहार सुन कर कहा—"वाह, मुझे तो दो अंजली अन्न दिलवा कर ही आंगन से हांक देना चाहते थे । मैं तो ऋषि को रिझाने के प्रयत्नों में पसीना-पसीना हो गयी । वे मेरी उपेक्षा ही करते रहे, सम्भवतः खिन्न भी हो गये । तेरे एक ही कटाक्ष का यह प्रभाव कि वे तुझ पर मुग्ध होकर तेरे पीछे दौड़ पड़े ! हां सुना है, मर्त्य लोक की नारियां किसी वशीकरण मंत्र का उपयोग करती हैं । स्वर्ग में हम अप्सरायें किसी की दया पर निर्भर नहीं करतीं । हमें अपने गुण-रूप पर विश्वास है परन्तु ये वनवासी, ग्राम्य रुचि रखने वाले ऋषि रूप-गुण को क्या पहचानें ? सम्भवतः इन्हें नारी के शरीर के प्रति ही कौतूहल है । तू निश्चय ही वशीकरण मंत्र जानती है । हे दासी, मेरे विशेष प्रयोजन के लिये वह मंत्र मुझे सिखा दे ! गुरु-दक्षिणा में तुझे सोने से तौल दूंगी ।"

दासी ने विनय से निवेदन किया—"हे अनुपम सुन्दरी स्वामिनी, तुम तो देवताओं को रिझाने में समर्थ हो । यह हीन दासी तुम्हें क्या सिखा सकती है ? मैं कोई मंत्र नहीं जानती ।"

मेनका को क्रोध आ गया । उसने दासी को लात मार कर कहा—"तू ऐसी ही रूपवती है और ऐसा ही तेरा शृंगार है कि ऋषि स्वयं तुझ पर आसक्त होकर तेरे पीछे दौड़ने लगे ! तू अपने आकर्षण का रहस्य नहीं बतायेगी तो तुझे स्वामी से विश्वासघात के दण्ड में शाप दे दूंगी !"

दूसरे दिन मेनका ने दासी के परामर्श से सुन्दर वस्त्राभूषण और प्रसाधन की सामग्री मंजूषाओं में बन्द करवा दी । दासी जैसे मलिन और अपर्याप्त वस्त्र पहन लिये ।

ऋषि विश्वामित्र को आश्रम की वाड़ के समीप जिस स्थान पर दासी दिखायी दी थी, मेनका उसी स्थान पर जाकर ईंधन चुनने लगी। वह आंचल में से कनखियों से झांक कर ऋषि की गतिविधि देखती रही। ऋषि की दृष्टि अनेक वार अपनी ओर होने पर उसने प्रकट किया कि वह भयभीत हो गयी है और संकोच से वहुत सिमट-सिमट कर छिपने लगी। ऋषि छद्मवेषी मेनका की ओर बढ़े तो वह भय प्रकट करके दूर होने लगी। ऋषि उसे ठहरने के लिये पुकार कर उसका पीछा करने लगे।

मेनका ने समझ लिया, मर्त्य लोक के पुरुषों के लिये नारी के रूप-लावण्य का आकर्षण उतना प्रबल नहीं होता जितना उसकी भीरुता और संकोच भरी 'ना' का।

× × ×

मेनका ने स्वर्ग लोक लौट कर अपना अनुभव कामदेव को सुनाया और विस्मय प्रकट किया—"मर्त्यलोक के नर के स्वभाव में यह क्या विचित्रता है कि वह नारी की कामेच्छा और समर्पण की उपेक्षा कर, उसके संकोच और 'ना' पर आसक्त होता है ?"

कामदेव मुस्करा दिये—"देवी का अनुमान ठीक है। मर्त्य लोक की नारी अपनी कामेच्छा प्रच्छन्न रखती है। वह अनिच्छा और भीरुता के नाट्य से ही नर को वश करती है।"

मेनका ने पुनः विस्मय प्रकट किया—"देव, यह तो अत्यन्त अस्वाभाविक बात है। मर्त्यलोक के नर-नारी की रचना तो देवों और अप्सराओं की आकृति और रूप के अनुसार ही की गयी है। ब्रह्मा ने काम की इच्छा के सम्बन्ध में उनमें यह भेद और विषमता क्यों रची है ?"

कामदेव हंस दिये—"हे देवी ! मर्त्यलोक के नर-नारी ने अपने विकास के क्रम में स्वयं बनाई परिस्थितियों में, अनेक स्वभाव और प्रवृत्तियां उत्पन्न कर ली हैं। उनके काम-व्यवहार में यह भेद ब्रह्मा अथवा प्रकृति का रचा हुआ नहीं है। यह भेद मर्त्यलोक की नारी का चातुर्य है। मर्त्यलोक का नर अभाव की आशंका में परिग्रह करता है। वह सामाजिक सम्पत्ति और सुरक्षा में विश्वास नहीं करता। वह निजी सम्पत्ति संचय नहीं करता है और उसे अपने उत्तराधिकारी को सौंप जाना चाहता है। उसे चिन्ता रहती है कि उत्तराधिकारी

स्वयं उसका ही औरस हो। नारी किसी अन्य पुरुष से गर्भ धारण न कर सके, ऐसी आशंका का निश्चित उपाय करने के लिये उसने नारी को भी व्यक्तिगत सम्पत्ति बना लिया है। पुरुष अहंकार में अपने को भोक्ता स्वामी और नारी को भोग्या समझने लगा। नारी का चातुर्य उसे आशंका का कारण और नारी की अपनी कामेच्छा असतीत्व उत्पन्न करने वाली उच्छृंखलता प्रतीत होने लगी। वह नारी के काम से त्रास प्रकट करने को उसकी सात्विकता और उसके मूर्खता के नाट्य को सरलता जानने लगा।

कामदेव ने समझाया—"देवी, सम्पत्ति तो उसी वस्तु को माना जा सकता है जिसमें अपनी स्वतंत्र इच्छा न हो, जो केवल स्वामी की इच्छा-पूर्ति का साधन हो। नारी सम्पत्ति बनने के लिये विवश हो गयी तो उसे इच्छा-हीन हो जाने और मूर्खता का नाट्य भी सीख लेना पड़ा। नारी अपनी पराधीनता में पुरुष का विश्वास और कृपा पाने के लिये, पुरुष के अहंकार को उकसाने के लिये काम से त्रस्त और भोग्या होने का नाट्य करके अपना प्रयोजन पूरा करने लगी।

फलित ज्योतिष

ज्योतिषियों ने अभूतपूर्व दैवी प्रकोपों और भयंकर घटनाओं से व्यापक संहार की भविष्यवाणी की थी—फरवरी के प्रथम सप्ताह में परस्पर-विरोधी आठ ग्रह एक रेखा में आ रहे हैं। उनके प्रभाव से प्रकृति के तत्व और महा-मतियों के मस्तिष्क भी विचलित हो जायेंगे। विश्वास-भीरु लोग कांप रहे थे—क्या नहीं हो जायेगा ?

कारोबार के लिये दूर-दूर बिखरे हुये परिवारों के लोग आशंका और भय से एकत्र हो गये थे—सर्वनाश के समय कम से कम एक साथ तो रहेंगे।

हमारे ममिया ससुर के नगर में बहुत बड़ी तिमंजिली हवेली है। अष्ट-ग्रह के योग के समय भयंकर भूकम्पों की भविष्यवाणी भी सुनी जा रही थी। मामा जी ने भूकम्पों से सपरिवार दब कर समाप्त हो जाने की आशंका से, अपनी देहात की जमीन में कामचलाऊ झोपड़ियां बनवा ली थीं। अष्टग्रह के सम्मि-लन से एक दिन पहले ही देहात चले जाने की तैयारी थी। हमें भी साथ चले चलने के लिये समझाने आये थे।

पिता जी के मित्र मुंशी जी संध्या समय अमीनाबाद से चौक लौटते हैं। गली के सामने से गुजरते हुये चाय के समय का अनुमान कर हाल-चाल पूछने के लिये पुकार लेते हैं। उस दिन भी आ गये थे। मुंशी जी को फलित ज्योतिष में मामा जी से भी अधिक विश्वास है। वह बोल पड़े—"विधि का लिखा को मेटन हारा···भाग्य से कोई बच सका है ? आप देहात में नहीं, चन्द्र लोक में झोपड़ियां बनवा लीजिये, भाग्य क्या वहां साथ नहीं जायेगा ?·· धरती फटकर झील बन जाये। बिहार के भूकम्प में धरती फटकर इतना जल निकल आया था कि गांव डूब गये थे।" उन्होंने तर्जनी से ऊपर की ओर संकेत किया, "हम तो कहते हैं, 'उसे' बचाना है तो बचायेगा ही !"

हमारा छोटा भाई नन्दन एन्थरोपोलोजी में रिसर्च कर रहा है, बोला—यह सब संस्कारों और विश्वासों के भय हैं। ऐसे भय केवल 'फलित ज्योतिष' में विश्वास रखने वालों के लिये हैं। मैं प्रसिद्ध बीस ज्योतिषियों की एक सौ बीस भविष्य गणनाओं के फलों का ब्योरा देख चुका हूं। केवल तीन भविष्य वाणियों को अंशतः खींचतान कर ठीक अनुमान बताया जा सकता है···।"

मुंशी जी को अल्हड़ नौजवानों का अनुभव की डींग हांकना नहीं सुहाता। वे चाय से भीगी सफेद मूछों को हथेली से पोंछ कर बोले—"अमां साहबजादे, अभी तुमने देखा क्या है ? तुम्हें तजुर्बा ही क्या है ? तुम्हें कोई बताने वाला नहीं मिला। फलित ज्योतिष पक्की साइंस है। बड़े-बड़े अंग्रेज और विलायत के साइंसदां और फिलासफर मान गये। भविष्य बताने वाले तो ऐसे होते हैं कि तीन पुश्त तक का नक्शा खींच कर रख दें और झख मार कर मानना पड़े। फलित ज्योतिष का अनुभव हम बतायें···।

मुंशी जी ने मुझे संबोधन किया—"राजेन्द्र भवन का किस्सा नहीं जानते ?"

"कौन राजेन्द्र भवन ?" स्मृति की सहायता के लिये मैंने पूछा।

"अमां, वो अकबरी दरवाजे वाला, जानते नहीं ?" मुंशी जी ने मेरी आंखों में देखा।

"हां, हां। राजेन्द्र भवन देखा तो है, क्यों ?"

मुंशी जी सोफा की पीठ छोड़ कर रहस्य पर प्रकाल डालने के लिये तत्परता की मुद्रा में पांव सोफे पर समेट पालथी मार बैठ गये और बोले—"राजेन्द्र मोहन रस्तोगी को भूल गये ! तुम्हारे वालिद साहब के मुवक्किल थे। उनका कोई न कोई केस लगा ही रहता था। रस्तोगी ने कुंवर नवलसिंह की पुरानी हवेली और जमीन खरीद कर मकान बनवाया था। मकान पर राजेन्द्र भवन का पत्थर भी लगवा दिया था लेकिन बूढ़े लोग अब भी 'नवलसिंह वाला राजेन्द्र भवन' कह देते हैं।

"नवलसिंह बहुत शरीफ आदमी थे। पुराने खान्दानी जागीरदार थे। नौकरी वे किसी की क्या करते ? वनिया-वक्काल तो थे नहीं, तिजारत भी उन के खान्दानी रुतबे को गवारा नहीं थी। खान्दानी जायदाद की आमदनी में हिस्सा था। मकानों के किराये का सहारा था। मूंछें नीची करना या किसी का बड़ा बोल गवारा न था। न अफसरों के यहां सलाम करने जाते न महफिलों से वास्ता। खिताब और मनसब की तमन्ना और शौक भी नहीं था। अपनी

और अपने खान्दान की इज्जत पर परछाईं नहीं झेल सकते थे। आबरू बनाये रखने के लिये दूसरे-तीसरे साल जायदाद या हाते-हवेली में से कोई हिस्सा बेच देना पड़ता। कभी-कभी बैठक की तनहाई से ऊब जाते तो नौकर के कंधे पर दुनाली बन्दूक रखवा कर गोमती के किनारे के कछार में निकल जाते। निशाना गजब का था।

"नवलसिंह के खान्दान का नाम आगे चलाने वाला कोई लड़का नहीं था। भगवान ने दो लड़कियां दी थीं। छोटी लड़की कम उम्र में चल बसी। बड़ी लड़की ब्याह के लायक हो गई पर लड़का नहीं हुआ। रिश्तेदारों और दोस्तों ने कुंवर को लड़के की उम्मीद के लिये दूसरी शादी कर लेने की राय दी। कुंवर दूसरी शादी के लिये तैयार नहीं हुये पर निरवंश हो जाने के विचार से तबीयत बुझी-बुझी सी रहती।

"याद होगा, हमारे बड़े भाई साहब नामी मुख्तार थे। जरूरत पड़ने पर नवलसिंह भाई साहब से ही मशविरा लेते थे। नवलसिंह को परेशानी में मकान-जमीन बेचने की जरूरत होती तो भाई साहब ही मदद करते। दोनों हम-प्याला, हम-निवाला थे। उन में क्या परदा हो सकता था? भाई साहब, नवलसिंह को कभी बहुत सुस्त देख लेते तो कह बैठते—"अमां कुंवर साहब, एक डोली और क्यों नहीं ले आते! आप के बुजुर्ग तो चार-छः रानियां भी कम समझते थे। आप कोई जोगी फकीर थोड़े ही हैं! अभी चालीस के भी तो नहीं हुये। भगवान चाहेंगे तो लड़का भी हो सकता है।"

"नवलसिंह ने भाई साहब से साफ-साफ कह दिया—"अमां, तुम दूसरी शादी की बात करते हो, एक ही ठकुराइन का खर्च इज्जत से निभ जाये। बेटी जवान हो गयी है। उस की शादी की फिक्र करें या ढलती उम्र में अपनी शादी करें! बेटी को माकूल खान्दान में देना है तो उस के लिये माकूल खर्चा भी चाहिये। हम लोगों के खर्चे तो जानते हो! रहा-सहा सब बिक कर भी बेटी अपने घर पहुंच जाये तो समझो भर पाये।

"नवलसिंह बेटी की शादी की फिक्र में थे। नीची हैसियत के खान्दान में बेटी दे नहीं सकते थे। ऊंची हैसियत के खान्दान में लड़की देने के लिये खर्चे का सवाल था। भाई साहब से अकसर यही जिक्र चलता रहता था। आखिर सब कुछ रहन रख कर कर्जा लेने को तैयार हो गये थे कि जो कुछ देंगे, बेटी को ही जायेगा। अपनी और ठकुराइन की आंख बन्द होने के बाद

जो कुछ बचेगा वह भी बेटी का ही होगा।

"माकूल लड़के की तलाश में बेटी उन्नीस बरस की हो गयी थी। नवलसिंह लड़के वालों के सब इसरार पूरे करने को तैयार हो गये। ठकुराइन बेटी की शादी के लिये ठाकुर से भी अधिक उतावली थीं लेकिन लड़के वाले के यहां से नाउन, बाह्मनियां लड़की को देखने आने लगीं तो ठकुराइन उन्हें ड्योढ़ी से ही टाल देतीं—बिटिया की तबियत ठीक नहीं है। कई बार ऐसा हो चुका था। नवलसिंह को बेटी की सेहत की बहुत फिक्र हो गयी। खुद आंगन में बहुत कम जाते। बेटी को कभी देखना भी चाहते तो ठकुराइन बेटी के सिर या पेट दर्द से परेशान लेटी होने या लिबास ठीक न होने की बात कहकर उन्हें टाल देतीं।

ठकुराइन बेटी की बीमारी का इलाज खुद ही कर रही थीं। नवलसिंह ने कई बार वैद्य, हकीम, डाक्टर को बुला लेने का इरादा जाहिर किया। नवलसिंह की ड्योढ़ी में कड़े पर्दे का चलन था। ठकुराइन ने कुंवर साहब की अक्ल पर हैरानी जाहिर की—"क्या टुच्चे लोगों की सी बातें करते हो? जवान लड़की को मर्दों—वैद्य, हकीम, डाक्टरों को कैसे दिखा दूं! जरा तबियत खराब है, ठीक हो जायेगी। मर्द औरतों की बातों में नोक-झोंक नहीं किया करते।"

"एक दिन कुंवर साहब ने बेटी की बीमारी की फिक्र में फिरंगी महल वाले हकीम साहब को बुलवा ही लिया। ठकुराइन ने हकीम साहब को लड़की की नब्ज दिखलाने के लिये ड्योढ़ी में पर्दा करवा कर बेटी की कलाई पर्दे के बाहर दिखला दी। उनके यहां जनाने में कमीन, खिदमतगारों के अलावा मर्द पांव नहीं रख सकते थे।

"हकीम साहब कोई खास मर्ज न बता सके। केवल मेदे की खराबी और कमज़ोरी बताकर नुस्खा दे दिया। उससे कुछ फायदा नहीं हुआ।

"जब ठकुराइन को शक हुआ तब हमल चार महीने का हो चुका था। ठकुराइन ने लड़की का हमल गिरा देने के सब तरीके कर लिये थे। भगवान को मंजूर न था सो हमल न गिरा। हमल आठ महीने का हो गया था। ठकुराइन लड़की को ऐसी हालत में किसी को कैसे दिखा सकती थीं। नवलसिंह फिक्र में बेटी को देखना चाहते तो उन्हें भी टाल देतीं। कहीं ठाकुर को मालूम हो जाय तो न जाने क्या कर बैठे?

"ठकुराइन कोशिश में थीं कि किसी तरह लड़की का पेट साफ हो जाये।

बच्चे को खत्म कर दें.....। अजी साहब, ठाकुरों और नवाबों की ड्योढ़ियों में पर्दे के भीतर क्या नहीं हो जाता ? ठकुराइन भगवान के भरोसे दिन गिन रही थीं कि लड़की की तबियत संभल जाये तो शादी कर डालें।

"नवलसिंह बेटी की तबियत के बारे में चार महीने से सुन रहे थे। हकीम के नुस्खे से फायदा नहीं हुआ तो नवलसिंह ने भाई साहब से बेटी की बीमारी का जिक्र किया। भाई साहब ने राय दी—"ठकुराइन को वैद्य, हकीम, डाक्टर बुलाने में एतराज है तो मेम डाक्टर क्यों नहीं बुला लेते ?" भाई साहब ने डफरिन हस्पताल की एक मेम डाक्टर की तारीफ बताई कि बड़े-बड़े अंग्रेज डाक्टरों का मुकाबला करती है। उसे चौधरी कुंदनसिंह के यहां बुलवाया गया था। चौधरी कुंदनसिंह की घर वाली छः महीने से खाट पकड़े थी। उन्होंने उस मेम डाक्टर को बुलाकर दिखाया था। चौधराइन तीन दिन में चलने-फिरने लायक हो गयीं। घर आकर मरीज देखने के दस रुपये लेती हैं।"

"नवलसिंह ने भाई साहब का हाथ पकड़ कर कहा—भाई साहिब, यह काम आप ही करवाइये ! किसी तरह बेटी की सेहत संभले और उसकी शादी हो जाये। इस मुसीबत में मदद कीजिये !

"भाई साहब अगले ही दिन मेम डाक्टर को घोड़ागाड़ी पर नवलसिंह के यहां ले आये। नवलसिंह ने लेडी डाक्टर को घर के भीतर पर्दे में लड़की की कोठरी तक खुद पहुंचा दिया और ड्योढ़ी में भाई साहब के पास आ गये।

"मेम डाक्टर पांच ही मिनट में भीतर से लौट आई। बहुत नाराज थी। डाक्टर लड़की के पलंग के पास पहुंच गई थी लेकिन ठकुराइन ने उसे लड़की को अच्छी तरह देखने नहीं दिया। मेम डाक्टर टूटी-फूटी हिन्दुस्तानी बोल लेती थी। उसने नवलसिंह के सामने गुस्सा जाहिर किया—"तुमने हमको क्यों बुलाया ? तुम्हारी बेगम ने हमको मरीज को देखने नहीं दिया। मरीजा को हमल है। हम उसका बदन नहीं देखेगा तो क्या बतायेगा ? तुम्हारा बेगम लड़की का हमल छिपाती है, क्या लड़की कुंआरी है ? तुम हिन्दुस्तानी लोग इस माफिक औरत का खून करता है।"

"नवलसिंह ने मेम डाक्टर की बात सुनी तो सांस रुक गयी, सकते में आ गये। उसे फीस देने के लिये रुपये हाथ में लिये खड़े थे सो बुत से खड़े रह गये। भाई साहब ने रुपये उनके हाथ से लेकर मेम की ओर बढ़ा दिये। मेम ने मरीज को देखा नहीं था इसलिये फीस नहीं ली और नाराजगी में बड़बड़ाती

चली गयी। नवलसिंह सहसा अपनी बैठक में दौड़ गये। बैठक से निकले तो बन्दूक हाथ में थी। आंगन के भीतर लपके जा रहे थे। ठकुराइन चीख पड़ीं। भाई साहब ने दौड़कर कुंवर साहब को पीछे से कौली में भर लिया। भाई साहब को जवानी में कसरत का शौक था। कभी-कभी अखाड़े में भी उतर आते। कद में नवलसिंह से ड्योढ़े।

"नवलसिंह की आंखों से चिनगारियां छूट रही थीं, चिल्लाये--"मुख्तार साहब, इस मामले में मत बोलिये ! इज्जत का सवाल है।"

"भाई साहब ने नवलसिंह को कौली में भर कर धरती से उठा लिया और बैठक में ले गये, बोले—"कुंवर साहब, आपकी आबरू के लिये आपसे पहले हमारी जान हाजिर है पर सोचकर कदम उठाइये ! अरे भई, लड़की का क्या है, जब चाहें औरतें ही गले में अंगूठा टीप दें लेकिन उस शख्स को, जिसने आपकी आबरू पर हाथ डाला है, पहले सजा दी जानी चाहिये।"

"भाई साहब की बात से नवलसिंह सोच में पड़ गये--यह कैसे मालूम हो ? कौन बतायेगा ? ड्योढ़ी में कमीन, कहारों और नौकरों के सिवा और कौन मर्द आ सकता है ?

"भाई साहब ने तसल्ली दी—"कोशिश की जायेगी, मौका दीजिये !"

"ठकुराइन क्या खबर देतीं, वे खुद रो-रो कर बेहाल थीं।

"नवलसिंह बैठक में सांझ तक, कठघरे में बन्द बाघ की तरह चक्कर लगाते रहे। भाई साहब चौकसी में साथ रहे। लड़की को खत्म कर दिया जा सकता था लेकिन वह कुसूरवार का नाम नहीं कुबूल सकती थी। नवलसिंह तुले हुये थे, आबरू बिगाड़ने वाले को जिन्दा नहीं छोड़ेंगे। लड़की को भी खतम कर देंगे, बाद में खुदकुशी कर लेंगे लेकिन कुसूरवार का पता कैसे चलता ?

"सांझ तक खुद नवलसिंह को ही याद आ गया--सराफे में बहुत बड़ी चोरी हो गयी थी। पुलिस कुछ न कर सकी लेकिन एक ज्योतिषी ने चोरों के हुलिये बता दिये। माल उत्तर में नदी पार चला गया था और धरती से दस हाथ की ऊंचाई पर कांठ और झाड़-झंखाड़ में छिपा था। माल तो नहीं मिला लेकिन ज्योतिषी ने सब कुछ बता दिया था। नवलसिंह ने भाई साहब से पूछ लिया—"आप किसी आमिल नजूमी या ज्योतिषी को नहीं जानते ?"

"उन दिनों शहर में उत्तराखंड से भृगु-संहिता वाले एक ज्योतिषी आये हुये थे। संहिता खोलने की दक्षिणा उस जमाने में भी इक्कीस रुपये लेते थे।

बड़े-बड़े जज, कलक्टर, कमिश्नर, अंग्रेज साहब और मेम लोग उनके यहां आजमायश के लिये आते थे और सर्टिफिकेट लिखकर दे जाते थे। भाई साहब नवलसिंह को भृगु-संहिता वाले ज्योतिषी जी के यहां ले गये।" मुंशी जी ने तर्जनी नन्दन की नाक की ओर उठा दी, "अब सुनो फलित ज्योतिष का चमत्कार·····।"

"भाई साहब ने पण्डित जी के सामने हाथ जोड़कर कहा–"कुंवर साहब का एक सवाल है। आप खुद ही समझ लें और जवाब बता दें तो कृपा हो।"

"पण्डित जी ने कहा–"बताने वाले हम कौन हैं? बताने वाली तो संहिता है। संहिता की दक्षिणा देकर अपना नाम बताइये तो गणना करके संहिता खोली जाय।"

"भाई साहब ने इक्कीस रुपये पण्डित जी के सामने रखकर नवलसिंह नाम बता दिया। पण्डित जी ने गणना करके संहिता खोल, नवलसिंह के वालिद का नाम पूछा। भाई साहब ने बता दिया—उदयसिंह।

"पण्डित जी संहिता में से सरासर पढ़ने लगे और नवलसिंह मुंह बाये हैरान—इस जीव का जन्म किसी बड़े मकान में होना चाहिये, मकान की ड्योढ़ी पश्चिम-दक्षिण को हो। मकान में कुआं या बावड़ी हो। तीन भाई-बहिन हों। रंग गोरा और बदन छरहरा हो। खानदानी जायदाद और इज्जत-आबरू का मालिक हो। अपनी इज्जत-आबरू के लिये गम खाये, किसी का बुरा न चेते, दिल का साफ, रहम करने वाला, ईमानदार, धर्मात्मा, लालच न करने वाला हो। पांच-छः वर्ष की आयु में बहुत बीमार हुआ हो या चोट खाई हो। नवलसिंह मुंह बाये हैरान थे। पण्डित जी ने नवलसिंह की ओर देखा और समर्थन पाकर फिर पढ़ने लगे।

"खानदानी आमदनी से गुजारा करे। उदार मन होने के कारण आमदनी से खर्च ज्यादा रहे। अठारह-उन्नीस साल की आयु में विवाह हो जाये। पण्डित जी ने फिर कुंवर साहब से नजर मिलायी और समर्थन पाकर पढ़ने लगे, सम्बन्धी इसकी जायदाद लेना चाहें। स्त्रियां इस पुरुष को बहुत चाहें परन्तु धर्म पर कायम रहे। एक घुटने पर तिल वाली औरत के प्रेम से न बच सके। सन्तान के कारण अशान्ति और चिन्ता परन्तु संतोष करे, ज्योतिषी जी ने फिर नवलसिंह से नजर मिलाई और समर्थन का मौन देखकर बोले—सैंतीस-अड़तीस की आयु तक संतान के संतान हो जाने का योग है·····"

"भाई साहब ने ज्योतिषी जी के सामने हाथ जोड़ दिये—"महाराज, अब रहने दीजिये !" नवलसिंह ने भाई साहब की ओर देखा। भाई साहब ने उठ चलने का इशारा किया। बाहर आकर नवलसिंह को समझाया, "कुंवर साहब, जो कुछ इज्जत ढकी है, ढकी रहने दीजिये ! आप की भी पैदायश से पहले जब बिटिया का मुकद्दर बन गया था तो इसे कौन रोक सकता था ! बिटिया क्या कर सकती थी ? हम सब उसकी कुदरत के खिलौने हैं, हैं या नहीं ? वही सब बुरा-भला करने वाला है।"

"नवलसिंह के कलेजे से गहरी सांस निकल गयी और आंखों में लाचारी की नमी आ गयी, बोले—"बिटिया की इस उम्र में यही होना था तो भगवान ने उसके लिये रिश्ता भी भेज दिया होता !"

"भाई साहब ने समझाया—"कुंवर साहब, अब मुकद्दर को मान लीजिये। संतान का योग है तो उसका बाप भी होगा। संतान का बाप ही उसकी मां का पति होता है। भाग्य और भगवान तो कुल बिरादरी देखते नहीं, फिर हमारे आपके मानने न मानने से क्या होगा ?"

"नवलसिंह ने ठकुराइन को लाचारी प्रकट कर समझाया। मां ने बिटिया को तसल्ली देकर बात की तो राज खुला। बांदी और लौंड़ी से भी ठकुराइन को पता लगा। अजी साहब, पर्दे का तो उनके यहां यह हाल था कि बहू डोली में बन्द ड्योढ़ी के भीतर आये और उसका तन अर्थी पर ड्योढ़ी से बाहर जाये। मंदिर, कुआं सब हवेली में। लड़की ने सात-आठ वर्ष की उम्र के बाद से ड्योढ़ी के बाहर कदम नहीं रखा था। हवेली के पिछवाड़े घोसी रहते थे। उनके भैंसें थीं। दूध बेचते थे। उनका लड़का था खूब कड़ियल जवान। झरोखे और छत से लड़की की आंख घोसी के लड़के से लड़ गयी थी। मिलने का कोई मौका नहीं था लेकिन जनाब जवानी की आग होती है। उनका मन ऐसा मिला कि जब मौका मिलता, झांका करते। लौंडी, बांदी देखतीं तो आंख बचा जातीं। ठाकुर की इकलौती लड़की, लाडली और मुंहजोर। चढ़ती उम्र में खून का उफान……। लड़की ने घोसी का हौंसला बढ़ाया। वह छत पर से रस्सी लटकाती। लड़का छत पर पहुंच जाता। कमबख्त को डर नहीं लगा। कोई देख लेता तो चोर-चोर का हल्ला मच जाता। नवलसिंह जैसा ठाकुर, जरा शक हो जाता तो कमबख्त की बोटी-बोटी काट लेता।

"नवलसिंह ने कलेजे पर पत्थर रख लिया। नवलसिंह ने गम में हवेली

और हाता आधे-पौने में बेच दिये। एक सांझ पण्डित को बुलाकर भौंरे-फेरे करा दिये। अपने यहां शास्त्र में राक्षस ब्याह भी तो बताया है! लड़की को डोली में बिठा रातों-रात घोसी के घर पहुंचा दिया। इज्जत तो लड़की ने गंवा दी थी, समझ लो--उसका धर्म बचा लिया। आधी रकम बिटिया को बिदा करते समय उसे सौंप दी और खुद सुबह ठकुराइन के साथ तीर्थों को निकल गये। वे फिर नहीं लौटे।"

मुंशी जी नन्दन की ओर घूम गये और तर्जनी उठाकर बोले—"समझे कुछ, इसे कहते हैं फलित ज्योतिष और भाग्य का फेर!"

नन्दन ने शंका और आपत्ति के लिये गर्दन ऊंची की—"लेकिन····· "

मुंशी जी ने डांट दिया—"लेकिन क्या ? तुम हो नास्तिक, तुम्हें कोई क्या समझा सकता है!"

●

लखनऊ वाले

छोटे सरकारी नौकरों के मन में छुट्टी के दिन के लिये बीसियों अरमान और काम रहते हैं। खास सौदा खरीदने, सम्बन्धियों से भेंट के लिये जाने या उन्हें अपने यहां निमंत्रण देने की सुविधा छुट्टी के दिन ही रहती है।

रविवार दिन एक पहर चढ़ चुका था। आधी रात से लगी हुई वर्षा जफर मियां को प्रकृति का अत्याचार जान पड़ रही थी। किसी दूसरे दिन वर्षा होती तो कम से कम दफ्तर चले जाते। वहां जगह खुश्क और बैठने के लिये कुर्सी रहती।

रात भर की वर्षा से छोटा तंग मकान सील गया था। गिच-पिच से ऊब और गंदगी अनुभव हो रही थी। पिछले महीनों में भी औसत से ज्यादा ही बरस चुका था। अक्टूबर लग गया था। जफर मियां सोच रहे थे—या अल्ला, आसमान के अरमान अब भी पूरे नहीं हुये!

जफर मियां बरसात के कारण बाहर नहीं जा सकते थे। उदासी में जफर मियां का मन ठोढ़ी बना लेने को भी न हुआ। पड़ोसी हकीम साहब के यहां से पिछले सप्ताह का अवध-पंच मांग लाये। अखबार में अफसाने के अलावा कुछ दिलचस्प न लगा लेकिन वक्त काटने के लिये पूरा अखबार और इश्तहार भी पढ़ डाले। खाना खाकर चादर में मुंह लपेट सो गये। बरसात की नागवार ऊब को खुशगवार बना लेने के लिये नींद के अलावा और क्या उपाय हो सकता है!

नन्ही जोहा के रो पड़ने से जफर मियां की नींद खुल गयी। आसमान साफ हो चुका था। बीवी बच्ची को आंगन में छोड़, सीले और गीले कपड़े छत पर फैलाने के लिये गयी हुई थी। चौथे पहर की धूप खिलखिला रही थी। जफर मियां अंगड़ाई लेकर उठे। बच्ची को बहलाने के लिये गोद में उठा लिया

ख्याल आया—अमीनाबाद तक घूम आयें । बाजार में अजीजों-दोस्तों के मिल जाने का चांस रहता है । पर जेब में चार-छः आने भी न हों तो बाजार न जाना ही ठीक है । अट्ठाईस तारीख थी । बीबी के पास मुश्किल से उतनी ही रकम रह गयी थी । महीने के आखीर तक नौकरी पेशा लोगों की जेब में पैसे रह ही कहां पाते हैं ? सोचा, सुपरिंटेंडेंट साहब के यहां ही सलाम कर आयें । हाकिम की नजरे इनायत से बरक्कत होती है ।

सेक्शन के सुपरिंटेंडेंट सिन्हा साहब को शतरंज का बहुत शौक था । हर छुट्टी के दिन चौथे पहर उन की बैठक में शतरंज जमती थी । रामेश्वर पांडे भी जफर मियां की तरह मैट्रिक ही पास था । जफर मियां से सिर्फ एक बरस सीनियर था लेकिन सिन्हा साहब की नजरे इनायत से कन्फर्म हो गया था । पांडे को शतरंज की समझ ऐसी-वैसी ही थी लेकिन सिन्हा साहब की हर चाल पर दाद देने लगता था ।

जफर मियां को शतरंज की अच्छी समझ थी । सिन्हा साहब उन का हौंसला बढ़ाने के लिये कभी मुस्कराकर उन से चाल के बारे में राय भी ले लेते थे । एक बार सिन्हा साहब का वजीर पिटा जा रहा था । वे जफर मियां को अपनी जगह खेलने के लिये कह कर भीतर चले गये थे । हाकिम की मुस्कराहट और दो बात कर लेना मातहत के लिये बहुत बड़ा सहारा होता है ।

बीबी छत पर कपड़े फैलाकर नीचे आ गयी और जोहा को ले लिया । जफर मियां ने झटपट सेफ्टी रेजर निकाला । ब्लेड को कांच के गिलास में पैनाया और बहुत ख्याल से शेव बनाई । बक्से में से रेशमी अचकन और धोबी का धुला गरारानुमा पाजामा निकाल कर पहना । सिर पर रोंयेदार ऊंची टोपी रखी । गली-सड़क पर कीचड़ के अंदेशे से वार्निशदार पम्प शू पहन लेने में हिचक महसूस हुई लेकिन बड़े अफसर के यहां जाना था । बीबी को एक किवामदार बीड़ा बनाने के लिये कह कर इत्र की शीशी ढूंढने लगे । चलते वक्त पतली छड़ी हाथ में ले ली ।

खुर्रमी मुहल्ले की गली बारिश से धुल गयी थी लेकिन वर्षा के बाद घंटे भर में ही कीचड़ की पतली तह फिर जम गयी । जफर मियां पायंचे को जरा ऊपर उठाये, पम्प शू को कीचड़ से बचाते, बहुत सावधानी से गली पार कर तारकोल की चौड़ी सड़क पर पहुंच गये ।

वर्षा से धुली हुई साफ-सुथरी सड़क पर आधा मील चलने के बाद सिन्हा

साहब के मकान के लिये रास्ता तस्वीर महल की बायीं ओर की बजरी की सड़क से था। इस सड़क पर घोसियों, धोबियों और मेहतरों की बस्ती है। सड़क की हालत बस्ती के अनुकूल ही है। सड़क के दायें किनारे कच्चे-नीचे घरों का सिलसिला है। इन घरों के सामने की पक्की नाली के साथ दो-ढाई हाथ जगह ही चलने लायक थी। उसमें भी छोटे-छोटे गढ़ों में वर्षा का मैला पानी अभी तक खड़ा था। सड़क के बायीं ओर आरम्भ में ही चार-पांच कच्चे मकान हैं। उस के आगे खाली जगह में घोसी अपनी भैंसे बांधते हैं। बजरी की सड़क की आधी चौड़ाई से, बायीं ओर की दस-पन्द्रह हाथ चौड़ाई में काफी दूर तक भैंसों के गोबर और मूत से मिले गंदले जल की छिछली तलैया बनी थी। बस्ती के नंग-धड़ंग पेट फूले बच्चे, मेंढकों को पत्थर मारने के लिये पानी में उछल-कूद कर छींटे उड़ा रहे थे।

वर्षा के कारण बस्ती की मुर्गियां और चीना बतखें सुबह से दुबकी हुई थीं। अब वे भूख की व्याकुलता में कीड़े-मकोड़े और दाने-दुनके के लिये छप-छप करती दौड़ रही थीं।

जफर मियां जिस समय तारकोल की सड़क से बजरी की सड़क पर आये, सामने से एक इक्का अपने ढीले पहियों पर हिचकोले लेता आ रहा था। ढाई हाथ ऊंची मरियल सी घोड़ी, गले में बंधे घुंघरुओं की झन-झन से पहियों की खड़खड़ाहट में सुर मिलाती इक्के को खींचे ला रही थी। दुबला-पतला दढ़ियल इक्केवाला तीखे स्वर में पुकारता आ रहा था—"बचना वे······हट के वे ······ धोबी के···देख के···अबे छींटे क्यों उड़ाता है गंदे पानी के······बचना मालिक, गरीब परवर······!"

इक्केवाला अपने हाथ आ रहा था परन्तु जफर मियां की पोशाक और रुतबे के ख्याल से उन की ओर बढ़ने पर जरा और रास्ता दे दिया। सड़क पर फैले कीचड़ और गन्दे जल के छींटे न उड़ने देने की सावधानी में घोड़ी की रास खींच कर उसे कदम-कदम कर लिया।

जफर मियां सड़क पर वर्षा से बनी गंदले जल की तलैया के पास से गुजर रहे थे तो एहतियातन बच्चों को छींटे न उड़ाने के लिये डांट दिया। बच्चे उनकी डांट से तितर-बितर होकर अपने-अपने घरों की ओर भागने लगे। भागता हुआ एक बच्चा घोड़ी के नीचे आ रहा था। इक्केवाले ने बच्चे को बचाने के लिये रास खींच ली।

"यह क्या बदतमीजी है ? रोको इक्के को !" जफर मियां चीख उठे। घोड़ी का अगला सुम सड़क पर खड़े छोटे से पानी में छप् से पड़ गया था। गंदले पानी की कुछ छींटे जफर मियां के वार्निशदार चमचमाते पम्प शू और सफेद पाजामे पर पड़ गये। इक्केवाला सहम कर इक्के को खुद ही रोक रहा था।

"अंधे हो, देख नहीं सकते ! सिर पर चढ़े चले आ रहे हो ! रोको, उतरो इक्के से ?" जफर मियां की आंखों में खून उतर आया। छड़ी वाला हाथ प्रहार के लिये उठ गया।

दुबला-पतला इक्केवाला इक्के से उतर कर अदब से चाबुक को बगल में दबा, हाथ जोड़ कर जफर मियां के सामने गिड़गिड़ाया—"गरीब परवर, गुलाम की खता माफ हो। गुलाम तो अपने वायें ही है। गुलाम दूर से हुजूर को आगाह करता चला आ रहा है।"

जफर मियां का छड़ी उठाये हाथ और ऊंचा हो गया। दूसरे हाथ से अपने पम्प शू और पाजामे की ओर इशारा कर धमकाया—"देखते नहीं बदतमीज, क्या कर दिया ? खाल उधेड़ कर रख देंगे !"

इक्केवाले ने गिड़गिड़ाकर माफी मांगी—"गरीब परवर, बच्चा घोड़ी के नीचे आ रहा था। मजबूरी में रास खींचनी पड़ी। घोड़ी का सुम पानी में पड़ गया। हुजूर, मुआफी चाहता हूं।"

जफर मियां ने और जोर से धमकाया—"जान बूझ कर बदमाशी करते हो और ऊपर से सरकशी में दलील करते हो ! जबान खिंचवा लेंगे ! दो हाथ बच कर नहीं निकल सकते थे ?"

इक्केवाले ने अदब से झुक कर मजबूरी प्रकट की—"नवाब साहब, घोड़ी के सुम उस पानी में"—इक्केवाले ने गन्दे पानी की ओर संकेत किया—"पड़ते तो और भी छींटे उड़ते। गरीब परवर, इसीलिये बचा कर निकल रहा था।"

जफर मियां का गुस्सा शांत न हुआ—"हम तुम इक्केवालों को खूब जानते हैं। तुम्हारी शरारत का मजा मिलेगा। दिखाओ इक्के का नम्बर ! चालान करवाये बिना नहीं छोड़ेंगे।" जफर मियां इक्के का नम्बर देख सकने के लिये इक्के के पीछे सड़क के बीचों-बीच पानी की ओर बढ़ आये।

'भों-भों' मोटर के हार्न की ऊंची आवाज बिलकुल नजदीक सुनायी दी। जफर मियां की नजर इक्के के नम्बर से उठ गयी और पीछे घूम कर देखा।

मोटर का हार्न पहले भी सुनायी दिया था पर गुस्से में उधर ध्यान नहीं दे सके थे।

इक्के से रास्ता रुका देख कर कार क्रोध में गुर्राती हुई, सड़क पर भरे पानी में से छर्र, छर्र गंदे पानी के फव्वारे फेंकती तेजी से निकल गयी। जफर मियां का पाजामा और अचकन और इक्केवाला छींटों से भर गये।

जफर मियां का गुस्सा इक्केवाले की गुस्ताखी से हद तक पहुंचा हुआ था। कार के सलूक से उनकी सांस रुक कर चेहरा तमतमा गया। वह बेपरवाही और तेजी से चली जाती कार को आग्नेय नेत्रों से देखते रह गये। कार तारकोल वाली सड़क पर वायीं ओर को घूम गयी।

कार के अदृश्य हो जाने पर जफर मियां की नज़र फिर इक्केवाले की ओर गयी। इक्केवाला तब भी विनय और आदर से सिकुड़ा, जरा झुका हुआ, चाबुक बगल में दबाये जफर मियां के सामने मौन खड़ा था। जफर मियां की नजर अपनी ओर घूमती देख उसने होठों पर आ गयी मुस्कान को दबा लिया और शरीफ आदमी को संभल जाने का मौका देने के लिये नजर फिरा ली।

जफर मियां का असमर्थ क्रोध बेबसी की फुंकार में बदल गया। तने हुये कंधे ढीले पड़ गये। उठी हुयी छड़ी जमीन पर टिक गयी। इक्केवाला हाथ जोड़े क्षमा-याचना की नम्रता से बोला—"गरीब परवर, गुलाम को इजाजत हो तो जाय!"

जफर मियां इक्केवाले से आंख न मिला सके। इक्केवाले की बात अनसुनी कर देने के सिवा और क्या कर सकते थे?

जफर मियां पोशाक की ऐसी हालत में अफसर के घर तो क्या, कहीं भी नहीं जा सकते थे। वे लौट पड़े। आठ-दस कदम ही लौटे थे कि इक्केवाले ने इक्का उनकी ओर बढ़ाकर पुकार लिया—"हुजूर, पोशाक की ऐसी हालत में सड़क-बाजार से कैसे गुजरियेगा? गुलाम हाजिर है, हुक्म हो तो दौलतखाने पर पहुंचा दे!"

जफर मियां अपनी पोशाक की हालत की मजबूरी में इक्के पर सवार हो गये और बता दिया—"काली सड़क पर खुर्रमी मुहल्ले तक ले चलो।"

इक्का बजरी की कच्ची सड़क लांघ कर तारकोल की साफ सड़क पर पहुंचा तो जफर मियां का मौन टूटा—"ओफ्···" मुंह से कार के लिये गाली निकल गयी। "इस···मोटर का नम्बर नहीं लिया नहीं तो मजा चखा देते!"

इक्केवाले ने घोड़ी को टिटकारी दी। उस की पीठ पर रास पटक कर ललकारा—"चल बेटी चल, हवा हो जा, खुश कर दे मालिक को ! नवाब साहब की सवारी मिली है" और जफर मियां की ओर कनखी से देख कर बोला, "बंदानवाज, इन मोटर-कार वालों का कोई क्या बना-बिगाड़ सकता है। हवा में चलते हैं, आसमान पर रहते हैं। इनकी नज़रों में ज़मीन पर चलने वालों की क्या हस्ती है ? उसकी कुदरत का क्या कहना ! उसने एक से एक को बड़ा बनाया है, एक के ऊपर एक को बड़ा रुतबा दिया है, बुलंद इकबाल बनाया है। इंसान अपने से बुलंद की तरफ देखता है और झुकता रहा है, अपने से छोटे के सिर पर कदम रख कर चलना चाहता है पर गरीब परवर असल बुलंद तो उसको कहिये जिसका सिर बुलंद रहे और नजरें जमीन पर रहें कि कोई बेचारा पांव के नीचे न आ जाये।"

इक्केवाला मानवता और सहृदयता की व्याख्या कर रहा था। जफर मियां इक्के के किराये के लिये जेब में दाम न होने की समस्या पर विचार कर रहे थे।

इक्का खुर्रमी मुहल्ले के सामने पहुंच गया। जफर मियां बोले—"बस, यहीं रोक दो ! मकान भीतर गली में दस-पन्द्रह कदम ही है, हम चले जायेंगे।" इक्केवाले से नजरें बचा कर बोले, "कल या परसों इधर से गुजरो तो दाम लेते जाना। जफर मियां को पूछ लेना।"

इक्केवाले ने जफर मियां का प्रयोजन भांप लिया—"वल्लाह ! हुजूर, दामों का क्या जिक्र है ? इक्का हुजूर का है। सड़क पर कैसे उतार दूं ! इस हालत में दौलतखाने तक कैसे जायेंगे ! हुजूर, मकान बता दीजिये, ड्योढ़ी पर ही उतारूंगा।"

ज़फर मियां ने समझ लिया—इक्केवाला चार आने पैसे उधार न छोड़ने के लिये उन्हें मकान के दरवाजे पर ही उतारना चाहता है। इस समय सवारी के लिये चार आने दे देना बीवी को खल जायेगा। महीने की आखिरी तारीखों में चार आने से दो दिन सालन-चटनी का निर्वाह हो सकता है पर मजबूरी थी। सोच लिया, खैर···पड़ोसी देख लेंगे, सवारी पर लौट रहे हैं।

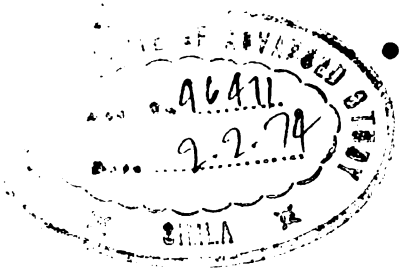

यशपाल साहित्य

संशोधित सूचीपत्र अक्टूबर १९६८

कहानी संग्रह

अभिशप्त	५—००
वो दुनिया	५—००
ज्ञानदान	५—००
पिंजड़े की उड़ान	५—००
तर्क का तूफान	५—००
भस्मावृत्त चिन्गारी	५—००
फूलो का कुर्त्ता	५—००
धर्मयुद्ध	५—००
उत्तराधिकारी	५—००
चित्र का शीर्षक	५—००
तुमने क्यों कहा था, मैं सुन्दर हूं ?	५—००
उत्तमी की मां	५—००
ओ भैरवी !	५—००
सच बोलने की भूल	५—००
खच्चर और आदमी	५—००
भूख के तीन दिन	६—००

राजनैतिक निबन्ध

रामराज्य की कथा	५—००
गांधीवाद की शव-परीक्षा	५—००
मार्क्सवाद (प्रेस में)	

हास्य निबन्ध

चक्कर क्लब	५—००
बात बात में बात	५—००
न्याय का संघर्ष	५—००
जग का मुजरा	५—००

उपन्यास

झूठासच—वतन और देश	१४—००
झूठासच—देश का भविष्य	१६—००
मनुष्य के रूप	७—५०
पक्का कदम	६—५०
देशद्रोही	७—००
दिव्या	६—००
गीता	४—००
दादा कामरेड	५—००
अमिता	६—००
जुलैखां	८—००
बारह घंटे	५—००
अप्सरा का श्राप	५—००
क्यों फंसें ? (प्रेस में)	

नाटक

नशे नशे की बात !	४—००

कथात्मक निबन्ध

देखा सोचा समझा	५—००
बीबी जी कहती हैं मेरा चेहरा रोबीला है	५—००

संस्मरण

सिंहावलोकन भ	
सिंहावलोकन भा	
सिंहावलोकन भा	
लोहे की दीवार के दोनो ओर	७—००
राहबीती	५—००

Library IIAS, Shimla
H 813.31 Y 26 S
00046471

विप्लव कार्यालय, २१ शिवाजी मार्ग, लखनऊ—१ (उ०प्र०)